समीचीन-सर्वोदय-काव्य

रचयिता —

मान सरोवर, हरिजन विवेक वाटिका, दहेज-मीमांसा, विधवा-विलाप पंचासिका, तलाक-मीमांसा आदि अनेक सफल ट्रैक्टों के निर्माता.

विनोदरत्न, व्याख्यान-भूषण,

श्री पण्डित छोटेलालजी वरैया

साहित्य भवन नयापुरा.

उज्जैन

वसंत पञ्चमी

वीराब्द २४८०   विक्रमाब्द २०१०

प्रकाशक:-

श्री भागीरथजी लक्ष्मीचन्दजी
ट्रष्ट भवन

संचालक

श्री मूलचन्दजी छावड़ा
मालिक-फर्म लखमीचन्द
मूलचन्द एण्डसन्स
नयापुरा उज्जैन.

अखिल भारतीय जैन मिशन द्वारा स्वीकृत

प्रथम संस्करण

१०००

मूल्य बारह आना

सूरजमल जैन के प्रबन्ध से
श्री जवेरी प्रिंटिंग प्रेस
चाँदनीचौक
रतलाम में
मुद्रित

❀ श्री ❀

समीचीन–सर्वोदय–तीर्थ के परम–सन्त १०८ आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज की स्तुति !

[१]

निज आतम में लवलीन हो, परपञ्च सब तुमने तजे।
भव-भोग-तन से ममत्त-सब तज पञ्च परमेष्ठी भजे ॥
निज स्वरूप विचार कर निज भाव में जे थिर भये।
उन शान्तिसागर परम-ऋषि के युगल चरणों हम नये ॥

[२]

सत्यार्थ-पथ पर कर गमन सब राग-द्वेष विकार हन।
सम्पूर्ण प्राणी–मात्र के आए प्रभू तुम भ्रातृ बन ॥
जल–जन्तु–कीट–पतङ्ग–पक्षी की सदय शुभ कामना।
उन शान्तिसागर परम-ऋषि की करत हम नित वंदना ॥

[३]

हिंसा–मई इस निविड़तम को सूर्य सम तुम सूरि हो।
शुभ शान्ति–करुणा-दया रस से नाथ तुम भरपूर हो ॥
इस तीर्थके तुम "कुसुम" हो अरु अखिल भुवि आधार हो।
हे ! शांतिसागर !! सूरिवर !!! मम वंदना शतवार हो ॥

* दोहा *

मङ्गलमय मूरत सुभग विश्ववन्द्य[१] गुण धीश।
"छोटे" नित वन्दत तिन्हें धर चरणों में शीश ॥

---

[१] आचार्य शान्तिसागरजी की विश्व वन्दनीयता के विषय में देखिये परिशिष्ट नम्बर १ पृष्ठ ६५

❀ श्री ❀

परम पूज्य प्रातःस्मरणीय योगीन्द्र चूड़ामणि
चारित्र चक्रवर्ती श्री १०८ आचार्य
शान्तिसागरजी महाराज के
पुनीत चरणों में भक्ति-
सहित यह सर्वोदय
काव्य सादर

❀ समर्पण ❀

भगवन् !

यह सुमन 'सर्वोदय' अहो !
सादर समर्पण आपको ।
स्वीकारिये गुरुवर इसे,
मम भूल सब अपराध को ॥
होकर विनम्र चढ़ा रहा,
यह तुच्छ प्रभु कुसुमाञ्जली ।
कहकर त्रिवार नमोस्तु 'छोटे'
अर्पण करत 'श्रद्धाञ्जली' ॥

समर्पकः–
"छोटेलाल बरैया"

समीचीन-सर्वोदय-काव्य

इस युग में समीचीन सर्वोदय के सञ्चालक महर्षि
चारित्र चक्रवर्ति योगीन्द्र चूड़ामणि १०८
आचार्य श्री शान्ति सागरजी महाराज

आप समीचीन सर्वोदय के प्राण हैं, इसलिये विश्व वन्द्य हैं।

देखिये परिशिष्ट पृष्ठ ६५ पर

प्रकाशकीय दो शब्द

यह समीचन-सर्वोदय काव्य जो हमारे सहृदयी पाठकगणों के करकमलों में है, वह समाज प्रसिद्ध विनोद रत्न, व्याख्यान भूषण, सुकविश्री पंडित छोटेलालजी वरैया की पारमार्जित लेखनी द्वारा सृजन हुआ है।

आपने, भव्य-भावना, रक्षाबन्धन, विधवा-विलाप-पञ्चासिका, सीता स्वयम्वर या धनुपयज्ञ-तलाक चालीसा; हरिजन विवेक वाटिका, दहेज मीमांसा, मान-सरोवर आदि करीब बीस सरस सुन्दर एवं अत्यन्त उत्तमोत्म रचनाएँ लिखी हैं। आप धार्मिक पौराणिक कहानियाँ तथा सामाजिक लेखों के भी उत्मोत्तम लेखक हैं अतः आपकी रचनाएँ जिस किसी के हाथ में पहुंची हैं उन्होंने उन की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है, और दिन प्रति दिन उन रचनाओं की मांग आती रहती है, इसलिये कितनी ही ट्रक्टों के तो दो-दो-तीन-तीन-संस्करण निकालने पडे हैं।

इन्ही सुकवि महोदय ने यह "समीचीन सर्वोदय काव्य" जो सम्पूर्ण विश्व को एक समीचीनता की महती देन प्रदान की है,—वास्तविक कल्याण का मार्ग प्रदर्शित किया है, एसे अत्यन्त उपयोगी काव्य को आज हम प्रकाशित कर मनस्वी सज्जनों के कर कमलों मे सादर अर्पण कर हम पूर्ण आशा करते हैं कि वे इसे अपना कर हमारे उत्साह को बढायेगें तो हम आपके उपकृत होंगें।

छावड़ा भवन
नयापुरा उज्जैन

निवेदक
मूलचन्द छावड़ा

श्री भागीरथजी लक्ष्मीचन्दजी परमार्थिक ट्रष्ट फण्ड

एवं श्री छावड़ाजी का संक्षिप्त

परिचय

इस उपर्युक्त संस्था का जन्म विक्रमाब्द २००१ में हुआ है इस संस्थाकी मूल संस्थापिका सौ. श्रीसुन्दरबाई सुपुत्री श्रीभागीरथजी पहाड़े हैं, श्रीभागीरथजी के स्वर्गवास होने के पश्चात् श्री सुन्दरबाई ने अपने पूज्य पिताजी की पवित्र स्मृतिमें इस ट्रष्ट की स्थापना की है।

प्रारम्भ में इसका मूल धन पांच हजार रुपये की लागत का एक भवन था, पश्चात् श्रीयुत मूलचन्दजी, छावड़ा ने अपने बड़े भाई श्री लक्ष्मीचन्द्रजी की पवित्र स्मृति में ट्रष्ट विधान के अनुसार द्रव्य प्रदान कर श्री लक्ष्मीचन्द्रजी का नाम उस भवनमें और सम्मिलितकर इस संस्था का नाम "श्री भागीरथजी लक्ष्मीचन्द्रजी पारमार्थिक ट्रष्ट" के नाम से घोषित कर दिया है।

इस फंडको कायम रखने और संचालन करने में श्री छावड़ा जी ने अविरलश्रम किया है तथा वे स्वयं उसका उत्तरदाइत्व रख कार्य संचालन कर रहे हैं जिसका यह परिणाम है कि आज उक्त संस्था सुरक्षित रूप से चल रही है।

संस्था के मूल धन कायम रखते हुये उसके द्वारा होने वाली आयको ही धार्मिक कार्यों में व्यय किया जाता है। अतः ट्रष्ट के विधानानुसार इस महत्त्व पूर्ण काव्य का प्रकाशन का श्रेय उक्त संस्था को है।

छावड़ाजी एक परमोत्साही कार्यकुशल-चतुर व्यापारी व्यवहार पटु व्यक्ति हैं, आपने कुछ समय पहले यहां के सिविल हास्पिटल में प्रसूतीगृह बड़ा सुन्दर निर्माणकर जनता का बड़ा भारी उपकार किया है ऐसे आपके अनेक कार्य हैं।

प्रस्तुत काव्य आपके द्वारा प्रकाशित हुआ है अतः आपको धन्यवाद है।

बरैया.
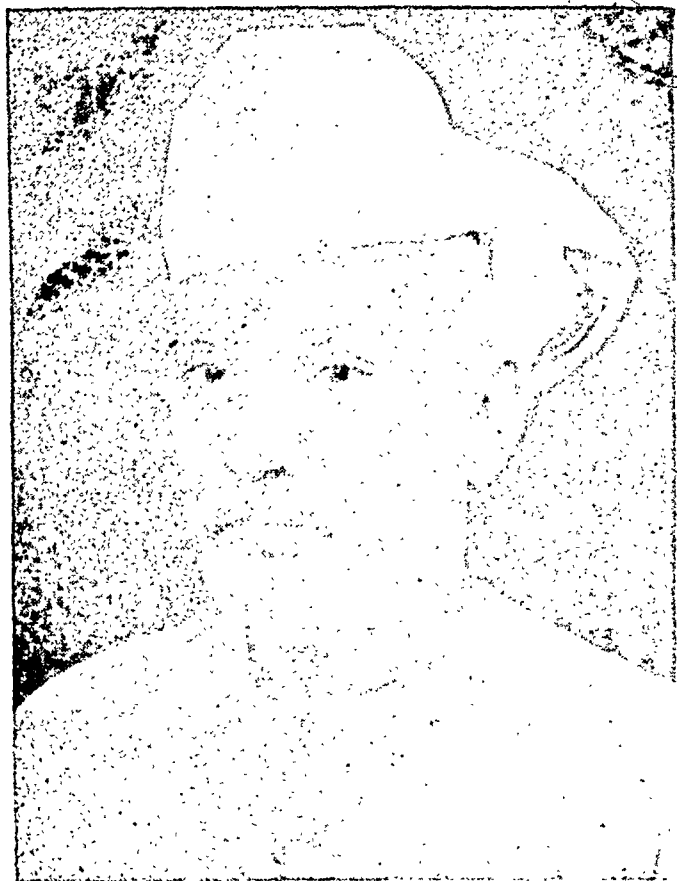
समीचीन-सर्वोदय-काव्य

प्रकाशकः-

श्री भागीरथजी लक्ष्मीचन्दजी ट्रस्ट भवन के प्रधान संचालक

श्री मूलचन्दजी छाबड़ा

मालिक फर्मः-श्री लखमीचन्द मूलचन्द एन्ड सन्स

जीवाजीगंज उज्जैन (मध्यभारत)

आत्म-निवेदन

भगवान महावीर द्वारा बताये गये, और आचार्य समन्तभद्र स्वामी द्वारा प्रचार में लाये गये "समीचीन-सर्वोदय" तथा वर्तमान समय के प्रकाश में आने वाले "सर्वोदय" पर हमने गम्भीरता पूर्वक अध्ययन कर इस " समीचीन-सर्वोदय-काव्य" को लिखने का विचार किया।

यह काव्य प्रायः समाप्त होनेको ही था कि एक दिन साहित्य भवनमें हमारे स्नेही मित्र-श्री मूलचन्दजी छावड़ा पधारे, उन्होंने इस काव्य को देखा, वे अत्यन्त प्रभावित हुए और उन्होंने हमें इस काव्यको प्रकाश में लानेकी प्रेरणा की, हमने स्थानीय विद्वानों को भी इस काव्य को बतलाया, उनके द्वारा हमें हतोत्साही ही होना पड़ा। तब हमने यह निश्चय किया कि कुछ भी क्यों न हो? एकबार दिगम्बर जैन समाज के महान धार्मिक संस्कृत ग्रन्थों के अनुवादक परम धार्मिक-सर्वोच्च विद्वान धर्मरत्न श्रीमान् पूज्य पण्डित लालारामजी शास्त्री तथा न्यायालंकार श्रीमान पूज्य पं० मक्खनलालजी शास्त्री सम्पादक जैनदर्शन को बतलाया जाय।

अतः उनको विनम्रता पूर्वक पत्र लिखा तथा, उन्होंने हमारी प्रार्थना स्वीकार कर इस काव्य को सूक्ष्म दृष्टि से और सैद्धान्तिक दृष्टि से संशोधन कर अपनी अमूल्य सम्मतियाँ (जो इसी काव्य में अन्यत्र मुद्रित है) लिख हमें आशीर्वादात्मक शब्दों द्वारा शुभाशीर्वाद दिया और हमारे उत्साह को बढ़ाया।

उक्त उभय शास्त्रियों द्वारा संशोधन होकर यह काव्य जब हमारे पास आया तब हमने श्री छावड़ाजी को तथा श्रीमान् सेठ सूरजमलजी सा० पाटनी को बतालाया, उन्होंने अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट की, किन्तु छावड़ाजीने पुनःप्रेरणा की कि, एकबार किसी आधुनिक विद्वान के पास और भेजकर सर्वाङ्ग सुन्दर बनाकर प्रकाशित किया जाय। तब हमने श्री अखिल भारतीय जैन मिशन के प्रधान

संचालक बाबू कामताप्रसादजी एम० आर० ए० एस० अलीगञ्जके पास भेजा, उन्होंने लिखा कि-"सर्वोदय-काव्य पढ़ा, श्रम और भावुकता से लिखा गया है, समय की चीज है, लोगों को रुचिकर होगा। आपको मेरी ओर से बधाई है।" साथमें हमें यह भी परामर्ष दिया कि आप इस उपयोगी काव्य को जैन मिशन द्वारा व्यापक रूपसे प्रचार में लावें।

इस प्रकार इस काव्य को हमने उक्त विद्वानों द्वारा संशोधन कराकर आज इसको प्रकाशित कर संवेगी पाठकों के करकमलों में समर्पण कर रहे हैं। इस काव्य के प्रकाशन का भार श्रीमान् सेठ मूलचन्दजी छावड़ा तथा श्रीमान सेठ सूरजमलजी भैय्या सा० उज्जैन ने वहन किया है, अतः हम उक्त विद्वानों के तथा प्रकाशक महोदयों के अत्यन्त आभारी हैं।

पाठकों से हमारा सानुरोध निवेदन है कि वे इसे एकवार आद्योपांत अवश्य पढ़ "अर्वाचीन-सर्वोदय" की अपूर्णता पर और "समीचीन-सर्वोदय" की सर्वाङ्गीन पूर्णता का निष्पक्ष और तुलनात्मक अध्ययन करेंगे तब उन्हें यह अवश्य ही ज्ञात हो जायगा कि जिस "सर्वोदय" का हृदय कितना विशाल था? उसको आज कितना संकीर्ण बनाया जा रहा है, अतः पाठकगण वास्तविक सचाईके स्वरूपको अपने जीवन में उतार कर सत्यमार्ग का अनुसरण कर अपना कल्याण करेंगे यही विनम्र निवेदन है।

अन्तमें हम अपने उक्त विद्वानों का तथा भूमिका के लेखक महोदय जो एक प्रतिभा-सम्पन्न महान् उद्भट विद्वान हैं जिन्होंने हमारी प्रार्थनाको स्वीकार कर अपनी अगाध विद्वतापूर्ण सहृदयता का परिचय देकर जो भूमिका लिखने का कष्ट किया है उनका एवं उभय प्रकाशक महोदयों, तथा श्री कान्तिलालजी शाह आदि जिन२ सज्जनों ने इस काव्य को समयोपयोगी बनाने में सहयोग दिया है उन सभी का हम हृदय से अभिनन्दन करते हैं।

ता. १-१-५४ विनम्र-छोटेलाल बरैया.

समीचीन-सर्वोदय काव्य की

विषय-सूची

१ प्रातःकालीन दैनिक प्रार्थना

२ काव्य परिचय

३ प्रस्तावना

४ काव्य में दिये गये ग्रन्थ-प्रमाणों की सूची

५ काव्य में दिये गये उद्गारों की सूची

६ अतीत की पृष्ठ भूमि १-१०

७ प्राच्य सर्वोदय [प्रथम सर्ग] १-१७

८ प्राच्य सर्वोदय की महत्ता [द्वितीय सर्ग] १८-३८

९ सर्वोदयमें धर्मकी सापेक्षता [तृतीय सर्ग] ३९-५१

१० सर्वोदयमें अहिंसा की सार्वभौमिकता [चतुर्थ सर्ग] ५२-६२

११ अर्वाचीन सर्वोदयमें विषमता [पञ्चम सर्ग] ६३-८४

१२ सर्वोदय की समीचीनता [षष्ठम सर्ग] ८५-९४

१३ परिशिष्ट-प्रकरण

(क) ये क्या लिखते हैं ?

(ख) आचार्य महाराजके विषयमें लोकमत ९५

(ग) ग्रन्थ-प्रमाण पृष्ठ सूची ... १००

(घ) उद्गारों की पृष्ठ सूची ... १०१

(ङ) अंग्रेजी ग्रन्थ प्रमाण पृष्ठ सूची १०३

काव्य की मौलिकता पर

समीचीन–सर्वोदय के प्रकाण्ड दार्शिनिक विद्वान

विद्यावारिधि-वादीभ-केशरी, धर्मधीर, न्यायालङ्कार श्रद्धेय

पूज्य गुरुवर्य्य श्रीमान् पंडित मक्खनलालजी शास्त्री

आचार्य–श्री गोपाल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय मोरेना

तथा प्रधान सम्पादक जैनदर्शन का

शुभाशीर्वाद

समीचीन–सर्वोदय काव्य छह सर्गों में विभक्त एवं हिन्दी पद्यमय रचनात्मक काव्य है। इस "समीचीन-सर्वोदय" काव्य को पढ़कर मुझे केवल शब्द सौन्दर्य तथा भाव पूर्ण गंभीर कविता का ही रस स्वाद नहीं हुआ किन्तु, सुमधुरपयः पूरित रत्नाकर के समान प्राणि–मात्र हितकारी, विशेष कर मनस्वी–मानव के लिये समीचीन-मार्ग-प्रदर्शक-अनेक अत्युपयोगी विषयों से खचित तत्वों का भी दिग्दर्शन हुआ है।

वर्तमान राजनैतिक दृष्टिकोण को लिये हुए जिस सर्वोदय का निर्माण राष्ट्रीय-नेताओं द्वारा हुआ है उस सर्वोदय और इस "समीचीम-सर्वोदय" का रहस्य समझकर इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि, "यदि इस समीचीन-सर्वोदय द्वारा महान् गंभीर संस्कृत वाङ्मय के रचयिता भगवान् समन्तभद्र आचार्य शिरोमणि के बताये हुए यथार्थ एवं समीचीन-मार्ग का पथ–प्रदर्शन नहीं होता

तो इस प्रचलित राष्ट्रीय सर्वोदय से विश्व कल्याणकारी-मार्ग का यथार्थ परिज्ञान नहीं होता।"

इस समीचीन-सर्वोदय काव्य में अनेक प्राच्य महर्षियों द्वारा रचित शास्त्रों एवं अनेक दैशिक-वैदेशिक प्रख्यात उद्भट विद्वानों के मन्तव्यों का उल्लेख देते हुए विद्वान सुकवि महोदय ने इस सुन्दर "समीचीन-सर्वोदय" में कीट-पतङ्ग-पशु-पक्षी और मनुष्यादि सब जीवों की रक्षा-पारस्परिक निश्छल प्रेम, एवं सहयोग की सद्भावना रखने का विधान बताते हुए जिस आदर्श "अहिंसा" का सिंहावलोकन कराया है वह अतीव प्रशंसनीय एवं उपादेय है, उसी प्रकार की अहिंसा से विश्व, सुख-संतोष एवं शांति का लाभ प्राप्त कर सकता है।

वर्तमान प्रचलित राष्ट्रीय सर्वोदय में जहाँ केवल मानव मात्र का-सो भी केवल उसके शारीरिक सुख का लक्ष्य रक्खा गया है वहाँ इस समीचीन सर्वोदय में धर्म-एवं राजनैतिक को परस्पर सापेक्ष तथा स्पष्टता लिये हुए नैतिक संयमी एवं धार्मिक जीवन का लक्ष्य तथा आत्मीय सिद्धि अथवा परमार्थ जीवन का सर्वोच्च आदर्श हमारे सामने रक्खा गया है। वास्तव में ऐसा ही सर्वोदय जीव-मात्र का कल्याणकारी होता है।

इस समीचीन-सर्वोदय काव्य के रचयिता समाज प्रसिद्ध कवि-भूषण आगमानुयायी-धर्मनिष्ठ मेरे सुयोग्य शिष्य विनोदरत्न, व्याख्यान-भूषण श्री पं० छोटेलालजी बरैया उज्जैन निवासी हैं, इन्होंने हरिजन-विवेक-वाटिका, तलाक-चालीसा, मान-सरोवर

आदि कई उतमोत्तम ट्रैक्टों की पद्यमय सरस रचनाएँ की है, अब-
तक की समस्त रचनाओं को मैं स्वर्ण-मन्दिर के समान समझता
हूँ और इस समीचीन-सर्वोदय काव्य को सर्वोत्तम तथा विशेष
मौलिक उस स्वर्ण-मन्दिर (रचनाओं में) पर स्वर्ण-शिखिर के
समान समझता हूँ। इस साहित्य-सौन्दर्य-पूर्ण सफल रचना के
लिये उक्त सुकवि महोदय का समाज कृतज्ञ रहेगा-मैं उन्हें भूरि-
भूरि धन्यवाद देता हुआ यह शुभाशीर्वाद देता हूँ कि, वे इसी
प्रकार अपनी मनोहर- रचनाओं द्वारा सैद्धान्तिक तत्वों को प्रकाश
में ला, सुयश सम्पादन करते रहें।

मक्खनलाल शास्त्री मौरेना

२५-११-५३

समीचीन–सर्वोदय की विमल–गङ्गा में स्नान करने वाले
विचार शील मनस्वी मानवों के लिये

प्रातःकालीन–दैनिक

प्रार्थना

(१)

दोष अठारह रहित हुए जे, बने सर्वदर्शी–जगदीश ।
मोक्ष-मार्ग का ज्ञान कराते उन्हें नमाते हम नित शीश ॥
चाहे हों वे ब्रह्मा–विष्णु–शङ्कर–बौद्ध तथा श्री वीर ।
वेही सच्चे देव हमारे जो पहुँचे भव–दधि के तीर ॥

(२)

अनेकान्त मय रूप धारणी, नय-प्रमाण तेरा परिवार ।
स्यादवाद-मय-चक्र लिये तूं करती मिथ्या-रिपु संहार ॥
अष्ट-रिद्ध-नव-निधि की दाता ऋषी-गणी नहीं पावैं पार ।
जयति-जयति कल्याण कारिणी तुम्हें वंदना बारम्बार ॥

(३)

कञ्चन काच बराबर जिनके निन्दक वन्दक एक समान ।
विषयाशा-हन–करुणा पालें करते पर उपकार महान ॥
इन्द्रिय-विषय-वासनाओं पर शान्ति-चित्त हो विजय करें ।
परम–तपोधन ज्ञानी गुरु वे, भव समुद्र से पार करें ॥

(४)

उनकी संगति सदा रहे अरु, मन मंदिर में ध्यान धरूँ ।
उनके जैसे आचरणों को प्रति-दिन हिरदय मांह धरूँ ।

जीव-मात्र सब मित्र बराबर सत्य वचन नित कहा करूँ।
चोरी तजूं तजूं पर-रमणी * शान्ति-सुधा-रस पिया करूँ॥

(५)

क्रोध-मान-माया को तजकर, लोभ शत्रु को दमन करूँ।
पर-सम्पति-पर विभव देख कर, ईर्षा भाव न हृदय धरूँ॥
ऐसे भाव रहें उर मेरे स्वात्म चिंतवन किया करूँ।
स्वार्थ त्याग उपकार करूँ पर, शिव-रमणी को शीघ्र वरूँ॥

(६)

बुरा-भला कहने पर पर भी मन धर्म ओर झुकता जावे।
आर्ष-मार्ग पर गमन करूँ नित शुभ परिणति मम हो जावे।
गुण-ग्राही में बनूं निरन्तर द्वेष-भाव का त्याग करूँ।
दीन-दुखी जीवों को लख कर उरमें करुणा भाव धरूँ॥

(७)

पाकर सम्पति-गर्व करूँ नहिं विपदा में सम भाव धरूँ।
वैर और अभिमान त्याग कर व्रत-संयम को ग्रहण करूँ॥
सदाचार से प्रीति धार कर मानुष भव को सफल करूँ।
ज्ञान-चरित की उन्नति करके देश-जाति उद्धार करूँ॥

(८)

नीति-निपुण राजा गण होवे, प्रजा-नृपति में प्रेम करै।
धर्म "अहिंसा" घर-घर फैलै जग-जीवन कल्याण करै॥
"छोटे" बड़े परस्पर हिल-मिल आपस में मिल प्रीति करें।
नित्य भावना यही हमारी वीर पाठ मुख पढ़ा करें॥

* इति शुभम् *

---

* स्त्रियाँ 'पर रमणी' की जगह 'पर पति को' पढ़ें।

|| श्री ||

अभिमत या काव्य-परिचय

सर्वोदय सिद्धान्त के महान विद्वान—समाज के सुप्रसिद्ध परमधार्मिक साहित्य सेवी—सैकड़ों महान् धर्म-ग्रन्थों के सफल अनुवादक

"धर्म रत्न" श्रीमान् पण्डित लालारामजी शास्त्री

लिखते हैं-

मैंने समीचीन-सर्वोदय-काव्य आद्योपान्त पढ़ा, इसमें छह सर्ग हैं-

१ प्रथम सर्ग का नाम "प्राच्य-सर्वोदय" है।

इसमें पहले सर्वोदय के स्वरूप का वर्णन करते हुए उसके महात्म्य पर प्रकाश डालकर अहिंसा के स्वरूपको संक्षेपमें बहुत विशद रूपसे वर्णन करते हुए यह स्पष्ट बतलाया है कि अहिंसा ही विश्व का कल्याण करने वाली 'सर्वोदय रूप' है।

२ दूसरे सर्ग का नाम "प्राच्य सर्वोदय की महत्ता" है।

प्राचीन काल में राजा लोग कितने श्रेष्ठन्याय प्रिय थे, तथा अहिंसा के वे उत्तम उपासक थे, शासनकाल में भी वे अहिंसा के मूल सूत्र को भूलते नहीं थे, प्रजा और पुत्र को पक्षपात—रहित समान दण्ड देते थे, आदि विभिन्न विषयों पर प्रकाश डालते हुए पंच-अनुव्रतों का संक्षेपमें विशद स्वरूप वर्णन किया है जो अत्यन्त आकर्षक एवं हृदयग्राही है।

३ तीसरे सर्ग का नाम "सर्वोदय में धर्म की सापेक्षता" है।

इसमें वर्तमान कालीन जो साम्यवादी आदि राज्य हैं वे धर्म पथ से बहुत दूर हैं, सर्वत्र अधर्म का साम्राज्य छाया हुआ है, उससे आज सर्वत्र त्राहि-त्राहि मचरही है, बिना धर्म के संसार

में शांति स्थापित, सुख,समृद्धि आदि की प्राप्ति होना कठिन है, आदि महत्व पूर्ण विषयों का विशद वर्णन किया गया है।

४ चौथे सर्ग का नाम "अहिंसा का सार्व भौमिकता" है।

इसमें देश तथा वैदेशिक अनेक महा विद्वानों की 'अहिंसा' के समर्थन में सम्मतियां देकर अहिंसा धर्म की सुन्दर विवेचनात्मक पुष्टी की है।

५ पांचवे सर्ग का नाम "अर्वाचीन सर्वोदय में विषमता" है।

इसमें, भारत के गांधीजी राष्ट्रपति आदि की अहिंसा-मय सम्मतियां दिखला कर यह दिग्दर्शन किया है कि वर्तमान में जो केवल मनुष्य मात्र की रक्षा की जाती है-मनुष्य की रक्षा के लिये अनेक जाति के मूक पशु-जीव-जन्तु प्रति दिन सहस्रों और लाखों की संख्या में जो संहार किया जारहा है वह सर्वोदय नाम तीर्थ के लिये महा कलंक है, इसलिये इस हिंसा मयी प्रवृत्ति को कभी भी सर्वोदय नहीं कह सकते हैं, इत्यादि विषयोंका सुन्दर वर्णन किया गया है, जो अति आकर्षक है।

६ छट्ठे सर्ग का नाम "सर्वोदय की समीचीनता" है।

इसमें, यह बतलाया है कि राग-द्वेष रहित, विश्वके प्राणीमात्र का भला चाहने वाला धर्मही सच्चा सर्वोदय है, राग-द्वेष-कषाय आदि ही विश्वका अहित कारी है इसलिये इसके त्यागमें ही आत्म का कल्याण है और वही सच्चा सर्वोदय है। इस विषय पर विवेचनात्मक प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तुत काव्य सर्वाङ्ग सुन्दर है, इसमें अनेक प्राचीन आचार्यों और अर्वाचीन विद्वानों के प्रमाण दिये गये हैं जिससे काव्य की प्रामाणिकता एवं मौलिकता अधिक बढ़ गई है।

विद्वान लेखक का श्रम प्रशंसनीय है हम उनके इस सफल श्रम के लिये उन्हें शुभाशीर्वाद देते हैं।

लालाराम शास्त्री.

"सर्वोदय की"
आधार शिला
सर्वान्तवत्तद्गुण मुख्य कल्पं,
सर्वान्त शून्यं च मिथोऽनपेक्षम्,
सर्वापदामन्तकरं निरन्तं
'सर्वोदयं' तीर्थमिदं तवैव.
(स्वामी-समन्तभद्र)
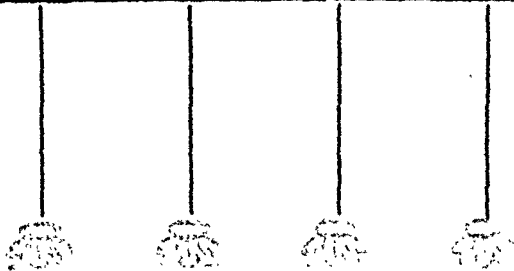
卐 卐 卐 卐

❀ तीर्थ-वन्दन ❀

जयति-जय मंगल मई,
हे तीर्थ ! सर्वोदय सदाँ।
तेरा शरण संसार में,
प्राणी न दुख पावे कदाँ ॥
संसार में तूं प्राणियों को,
एक मात्र अधार है।
इसलिये "छोटे" तुम्हें,
वन्दन करत शतबार है ॥

विनम्रः-

लेखक

॥ श्री ॥

प्रस्तुत काव्य में दिये गये प्रमाणों की आधार शिला

(ग्रन्थ नाम)

१ अनागार धर्मामृत
२ अथर्व वेद
३ अशोक के शिलालेख नं. १३
४ अशोक के धर्म लेख नं. ५१
५ अमृत बजार पत्रिका
६ आदि पुराण
७ आत्मानुशासन
८ आप्त परीक्षा
९ आइने अकबरी
१० आर्द विरफ
११ इतिहास तिमिर नाटक प्र. खं
१२ कौटिल्य अर्थ शास्त्र
१३ कुरान शरीफ
१४ कल्याण
१५ गोमट्टसार
१६ छहढाला
१७ जैन शासन
१८ जातक माल
१९ जैन गजट हीरक ज. अङ्क
२० दश आज्ञाएँ
२१ द्रव्य संग्रह
२२ धम्म पद
२३ धर्मयुग
२४ नीतवाक्यामृत
२५ पार्श्व पुराण
२६ पञ्चाध्यायी
२७ पुरुपार्थ सिद्धयुपाय
२८ पञ्चतंत्र
२९ बृहद् स्वयम्भू स्तोत्र
३० बुधजन सतसई
३१ वाल्मीक रामायण
३२ वैशेपिक दर्शन
३३ विष्णु पुराण
३४ भगवद्गीता
३५ भाव संग्रह
३६ भगवान बुद्धदेव (काशीनाथ)
३७ भगवानमहावीर(भंडारीकृत)
३८ भैंक क्रिन्डल एंशियेन्ट इ.
३९ महापुराण
४० महावीर चरित्र
४१ महाभारत
४२ मनुस्मृति
४३ महात्मा गौतम बुद्ध
४४ मीमाँसा दर्शन

४५ मुण्डकोप निषध
४६ मोक्ष शास्त्र
४७ मुलातुमुलसादीन
४८ युगधारा मासिक
४९ राजवर्तिकालंकार
५० रत्नकरण्डक श्रावकाचा
५१ लघीयस्त्रय
५२ सर्वार्थ सिद्धि
५३ सागारधर्मामृत
५४ सभाष्य अधिगमसूत्र
५५ सम्यक्त्व कौमदी
५६ सामायिक पाठ
५७ सुभाषित रत्न भाण्डागार
५८ सुत्तनिपात
५९ शिव पुराण
६० सर्वभूतदयानुकम्पा
६१ हिन्दुस्थान की पुरानी स.

कुछ अंग्रेजी ग्रन्थों के नाम

---

1 King Henry V.
Act. 3rd, C. V. I
2 Speech at Vancouver (America) vide Statesman 6-11-49
3 Amrita Bazar Patrika 31-10-1904: & 40
4 Fulop Miller, Mind & Face of Bolshevism
5 Ain-i-Akbari
6 Modern Review oct. 1930
7 Dhammapada
8 The Jatak Mala
9 The Buddha Chaitar by Ashwaghosha.
10 Mahavagga
11 Bible
12 Merchant of Venice
13 Pure Thoughts

|| श्री ||

प्रस्तुत काव्य में दिये गये पूज्य आचार्यों और विद्वानों तथा अर्वाचीन प्रतिष्ठित पुरुषों के उद्गारों की आधार शिला

(शुभ नाम)

१ भगवान कुन्द कुन्द स्वामी
२ भगवान समन्त भद्र स्वामी
३ भट्टाकलंक देव
४ भगवज्जिनसेनाचार्य
५ भगवन उमास्वामी या स्वाति
६ गुणभद्राचार्य
७ स्वामी अमृतचन्द्राचार्य
८ आ. नेमिचन्द्र सि. चक्रवर्ति
९ स्वामी अमितगति आचार्य
१० श्री सोमदेवसूरि
११ स्वामी देवसेनसूरि
१२ पूज्यपाद स्वामी
१३ प्रवर पं. आशाधरजी
१४ श्री पं. भूधरदासजी
१५ श्री पं. बुधजनदासजी
१६ श्री पं. दौलतरामजी
१७ श्री महाकवि असग
१८ श्री आर. सी. दत्त
१९ अब्राहाम लिंकन
२० अब्दुल फजल
२१ उपराष्ट्रपति श्रीराधाकृष्णन्
२२ एरियन यूनानी
२३ एलची अब्दुलरज्जाक
२४ महाकवि वाल्मिक
२५ महाकवि कालीदास
२६ कवि नरहरीजी
२७ श्री काशीनाथजी
२८ श्रीकर्नेल स्लीमन
२९ गुरु नानक
३० श्रीजार्ज बर्नडशा
३१ श्रीमन्त जीवाजीराव सिंधे
(राजप्रमुख मध्यभारत)
३२ डाक्टर हैरिस प्रीलो
३३ डाक्टर जोसिया ओल्ड
३४ डाक्टर जानवुड
३५ तानयुनशां
३६ न्यायमूर्ति श्रीनियोगीजी
३७ प्रोफेसर पीरोगेसेंडी
३८ प्रोफेसर वायल
३९ प्रोफेसर सिम्स वुडहेड

४० प्र० मंत्री श्रीजवाहरलालजी
४१ श्रीवसिष्ठ
४२ श्रीवेणीप्रशादजी
४३ श्रीविवेकानन्दजी
४४ श्रीव्रजलालजी वियानी
४५ महाराजा भोज
४६ महात्मा बुद्धदेव
४७ महाकवि शेक्सपियर
४८ महात्मा भगवानदीन
४९ महात्मा गौतमबुद्ध
५० महात्मा श्रीगांधीजी
५१ महाकवि भण्डारी
५२ मेगास्थानीज
५३. राजा शिवप्रशादजी सि. हि.
५४ श्री रोम्या रोला
५५ लार्ड एवरी
५६ श्रीलेलिन
५७ सम्राट अशोक
५८ सम्राट चन्द्रगुप्त
५९ सम्राट सिकन्दर
६० सम्राट अकबर
६१ सी. एफ. इण्ड्रूज
६२ सेन्टल्यूक
६३ सर हेनरी थाम्सन
६४ सन्त फ्रांसिस
६५ सन्त विनोवाजी
६६ सुमेरुचन्दजी दिवाकर
६७ श्री हैरिस सा.

अतीत की पृष्ठ भूमि

प्रमुख-पुरुषों के ऐसे आन्तरिक उद्गारों से यह स्पष्ट हो जाता है, कि मानवता के परित्राणार्थ भगवती "अहिंसा" की प्रशान्त छाया का आश्रय लिये विना अब कल्याण नहीं है। वास्तविक सुख, शाश्वतिक शान्ति और समृद्धि का उपाय क्रूरता पूर्ण प्रवृत्ति का त्याग करने में है। वैज्ञानिक आविष्कारों के प्रसाद से हजारों मीलों की दूरी पर अवस्थित देश अब हमारे पड़ोसी सदृश हो गये हैं। और हमारे सुख-दुख की समस्याएँ एक दूसरे के सुख-दुख से सम्बन्धित और निकटवर्तिनी बनती जारही हैं। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से पूर्णतया पृथक रहकर अब अपना अद्भुत आलाप छेड़ते नहीं रह सकता है। ऐसी परिस्थिति में हम सब के कल्याण की दूसरे शब्दों में जिसे "सर्वोदय" का मार्ग कहेंगे ओर दृष्टि देनी होगी।

इस सर्वोदय में सर्व जीवों का सर्वाङ्गीण उदय अर्थात् विकास विद्यमान होगा। "सर्व" शब्द का अभिधेय "जीव-मात्र" के स्थान में केवल "मानव-समाज" मानना ऐसा ही संकीर्णता

और स्वार्थ भाव पूर्ण होगा जैसे ईसा के "Thou Shalt not Kill इस वचन का "जीव वध" निषेध के स्थान में "केवल मनुष्य-वध" निषेध किया जाना है।

आज से १७०० वर्ष पूर्व जैनाचार्य स्वामी समन्तभद्र ने भगवान् महावीर के अहिंसात्मक शासन को "सर्वोदय तीर्थ" द्वारा संकीर्तित किया था, यह "सर्वोदय" तीर्थ—

सर्वापदामन्त करं निरंतं।
सर्वोदयं तीर्थमिदं तवैव॥

स्वयं अविनाशी होते हुये भी सर्व विपत्तियों का विनाशक है। इस अहिंसात्मक तीर्थ के अपार सामर्थ्य का कारण यह है कि, उसमें अनन्त शक्तियों का अजेय भण्डार तेज पुञ्ज आत्मा का बल प्राप्त होता है, जिसके समक्ष संसार का केन्द्रित पशुबल-नगण्य हो जाता है। आज क्रूरता की वारुणी पीकर मूर्च्छित और मरणासन्न संसार को वीतराग प्रभु की करुणारस-सिक्त संजीवनी के सेवन की अत्यन्त आवश्यकता है। हिंसात्मक मार्ग से प्राप्त अभ्युदय और समृद्धि वर्षाकालीन क्षुद्र जन्तुओं के जीवन सदृश अल्प काल तक ही टिकती है और शीघ्र ही विनष्ट हो जाती है पर "अहिंसा" की अजेय शक्ति से प्राप्त सुख श्री अक्षय आनन्द दायिनी व सर्व कल्याण कारिणी होती है।

इस सम्बन्ध में महाकवि शेक्सपियर का यह कथन महत्व पूर्ण है कि:—

" When lenity and cruelkty play for a kingdom the gentler gamstar is the soonest winner"

King Henery V Act 3rd, C. VI.

जब किसी साम्राज्य की प्राप्ति के लिये क्रूरता पूर्ण और करुणामय उपायों का आश्रय लिया जाय, तब ज्ञात होगा कि मृदुता का मार्ग शीघ्र ही विजय प्राप्त कराता है।

इस युग में हम गणनातीत नकली वस्तुओं को देखते हैं, इसी प्रकार आज यथार्थ दया के देवता के स्थान में मस्करी पूर्ण कृत्रिम "अहिंसा" देखते हैं, जिसका अन्तःकरण हिंसात्मक पाप-पुञ्ज प्रतारणाओं का क्रीड़ा-स्थल है, ऐसे अद्भुत अहिंसावादी, मधुर पद विन्यास में प्रवीण सुन्दर पक्ष सुसज्जित, प्रियभाषी मयूर के समान मनोज्ञ मालूम पड़ते हैं, किन्तु स्पष्ट सामग्री के साथ आते ही इनकी हिंसक वृत्ति का विश्व दर्शन हो जाता है ऐसी वृत्ति से क्या कभी मधुर फल की प्राप्ति हो सकती है ?

सुवर्ण सदृशं पुष्पं फलं रत्नं भविष्यति।
आशया सेव्यते वृक्षः फल काले टण्ठ नायते ॥

भावार्थ—किसी ने एक वृक्ष के लहलहाते हुए सुनहरी रंग के पुष्पों पर मुग्ध हो उस वृक्ष की इस आशा से आराधना आरम्भ की, कि फल काल में वह रत्न राशि को प्राप्त करेगा, किन्तु अन्त में टन्टन ध्वनि देनेवाले फलों की उपलब्धि ने उसका भ्रम दूर कर दिया। इसी प्रकार आज की हिंसात्मक प्रवृत्ति

वालों की उनकी चित्तवृत्ति के अनुसार अद्भुत रूप रेखा को देख कर भीषण भविष्य का विश्वास होता है। हिंसागर्भिणी नीति के उदर से उत्पन्न होनेवाली विपत्ति-मालिका के द्वारा विश्व की शोचनीय स्थिति विवेकी व्यक्ति को जागृत करती है।

अहिंसा की ज्योति से विश्व को अलोकित करने वाले वृषभादि महावीर पर्यन्त चौवीस तीर्थङ्करों का बोध कराने वाले चौवीस आरं अशोक चक्र में पाये जाते हैं। यह बात विश्व के इतिहास वेत्ता जानते हैं कि "अहिंसा" विद्या का निर्दोष प्रकाश जैन तीर्थङ्करों से प्राप्त होता रहा है। आइने अकबरी आदि से ज्ञात होता है कि अशोक के जीवन का प्रारम्भ काल जैन धर्म से संबंधित रहा है। भारत के प्रधान मत्री पडित जवाहरलालजी नेहरू ने अमेरिकावासियों को राष्ट्र ध्वज का स्वरूप समझाते हुए कहा था कि:—

The Chakra signifies progress and a call to tread the path of righteousness. India wished to follow the ideal symbolised by the wheel.

—Speech at Vancouver [America] vide.
Statesman. 6-11-1949.

"यह चक्र उन्नति और धर्म-मार्ग पर चलने के आव्हान को द्योतित करता है। भारत की आकांक्षा है कि वह चक्र द्वारा प्रकाशित आदर्श का अनुगमन करे।" यदि भारत राष्ट्रधर्म चक्र के गौरव के अनुरूप प्रवृति करने लगे तो एक नवीन मंगलमय

जगत का निर्माण होगा। जहां शक्ति, सम्पत्ति, समृद्धि तथा सम्पूर्ण उज्जवल कलाओं का पुण्य समागम होगा। अभी जो अधिकतर अहिंसा का जयघोष सुनाई पड़ता है, उसका बातें द्वारा रामनाम पाठ से अधिक मूल्य नहीं है। जबतक लोक-नायकों, तथा ग्राम-पुरवासियों द्वारा करुणा–कल्पलता के मूल में प्रेम, दया त्याग, शील, सत्य, संयम, आकिंचन आदि का जल न पहुँचेगा तबतक सुवास सम्पन्न सुमनों की कैसे उपलब्धि होगी? आज उन लतिकाओं के पत्रों में जल सिंचन की बड़ी-बड़ी बातें सुनाई पड़ती हैं, लम्बी-लम्बी योजनाएँ बनती हैं, किन्तु बेचारी जड़ जल–बिन्दु न मिलने से सूखती जा रही है, उस ओर कौन ध्यान देता है? क्या श्री महात्मा गांधीजी के विचारों को प्रचारित करने का पुण्य संकल्प करने वाला "सर्वोदय-समाज" इस करुणा-प्रसाद के कार्यक्रम को अपने विषयों की तालिका में प्रथम स्थान नहीं दे सकता है?

परन्तु क्या किया जाय? आज के भारत पर पाश्चात्य संस्कृति की अमिट छाया होगई है, जहाँ मनुष्य के अतिरिक्त किसी भी प्राणी में प्राण नहीं माना जाता है, और कहा है कि जो कुछ है सो मानव ही है और मानव के लिये ही सब कुछ है। मानव के भोजन, अथवा रसास्वादन के लिये आज बड़े बड़े पशुओं को मौत के घाट उतारा जा रहा है। मानव के स्वास्थ्य की रक्षा के लिये बड़े-बड़े पशुओं का तेल निकाला जाता है, पशुओं को मार-मार कर उनसे जन-स्वास्थ्य के लिये इन्जेक्शन तैयार किये जाते हैं।

सारांश यह है कि जिस मनुष्येतर प्राणी से मनुष्य को लाभ पहुँचता है या उसका मनोविनोद होता है उसी प्राणी को नष्ट कर दिया जाता है। जिस प्रकार पाश्चात्य देशों में ऊपर बताये हुए ईसा के सिद्धान्तों में "सर्व" का अर्थ "मानव" समझा जाता है ठीक उसी प्रकार आज के "सर्वोदय-समाज" या तीर्थ ने अपने सार्व भौमिक दायरे को छोड़ केवल मानव मात्र तक ही सीमित बना लिया है, उसी के अनुसार यहाँ प्रथा चल पड़ी है।

आज यदि कोई किसी मनुष्येतर प्राणी की रक्षा के नाते किसी प्रकार की कोई विधि का पालन करता है तो उसको यह उपालम्भ दिया जाता है कि एक छोटे से जीव की रक्षा का तो स्वाँग रचा जाता है किन्तु बेईमानी-धोखेबाजी-असत्य आदि से मनुष्य को सताया जाता है। इस प्रकार के उपालम्भ में मानव के हित की भावना हो सो ऐसा नहीं दीखता है। मानव के हित की भावना तभी दृष्टिगत हो सकती है जब कि ऐसा उपालम्भ देने वाले महानुभाव मानव के साथ किसी प्रकार की कोई चाल ही न चलते हों? ऐसे मानव-हित की भावना का दम भरने वाले राजनीति में भाग नहीं ले सकते हैं। अपने व्यक्तिगत ऐहिक स्वार्थ के लिये भी कुछ प्रयत्न भी नहीं कर सकते हैं क्योंकि आज की राजनीति का अर्थ ही मानव के साथ बेईमानी-दम्भ और मायाचार करने का है, एवं जिन कामों से अपना ऐहिक व्यक्तिगत स्वार्थ सिद्ध होता है उनसे दूसरे लोगों का नियम से अहित

होता है। दूसरे लोगों को अपने अधिकार में रखना उनका अहित और अपना स्पष्ट हित है, इसलिये कहना पड़ता है कि ऐसे उपालम्भ-दाताओं तथा समालोचकों के हृदय में मानव मात्र के हित की भावना भी नहीं है।

यदि "सर्वोदय" में आये "सर्व" शब्द का एक सीमागत अर्थ मानव मात्र भी किया जाय तो जबतक मानव मात्र में किसी भी कारण से समुत्पन्न वैमनस्य रहे तो उसे "सर्वोदय" नहीं कहा जा सकता, जहाँ एक मानव का उदय और एक का अस्त हो, जहाँ एक दुखी और एक सुखी हो, जहाँ एक अपराधी और एक दण्ड-दाता हो, वहाँ कैसा "सर्वोदय"?

संसार में मानव में ही जीव या प्राण हो! यह बात नहीं, चौरासीलाख प्रकार की योनियों में अनन्त जीव-राशि भरी पड़ी है। अन्य पशु-पक्षी-कीट-पतङ्ग आदि में जीवन माना जाय या जीव मानकर भी उन्हें सताना महान् छद्म और "सर्व" शब्द का एक सीमित अर्थ करना महान् अपराध है और वह ऐसा अक्षम्य है जिसकी तुलना नहीं।

सच्चा "सर्वोदय" वहां है जिसमें अपना व्यक्तिगत ऐहिक स्वार्थ न हो, सांसारिक राजनैतिक मानव सर्वोदय का पात्र नहीं हो सकता है यदि वह संसार से सम्बन्ध या उसमें निमग्न होकर भी अपने लिये "सर्वोदय" का ठेकेदार समझता है तो उसके बराबर संसार में कोई मायावी नहीं है। सच्चा "सर्वोदय" वही

हो सकता है जिसमें सांसारिक पदार्थों में रत्तीभर भी व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं होता। "सर्व" शब्द का अर्थ केवल मानव न मान कर जो जीव मात्र या प्राणी मात्र समझते हैं, ऐसे महापुरुष किसी प्राणी को उनसे बाधा न हो–कोई भी जीव उनके लिये या उनकी ओर से सताया न जाय, इसलिये वे अपने पास रंच मात्र भी परिग्रह नहीं रखते हैं। सचेतन पदार्थ में भी उनका किसी जीव के साथ राग नहीं। एक के साथ राग भी अन्य के साथ द्वेष है। राग–द्वेष के साथ "सर्वोदय" का संबंध कहां ?

सच्चा वीतरागी ही "सर्वोदय" का भागी होता है। वीत-रागता ही एक ऐसी वस्तु है जिसमें प्राणी मात्र का उदय हो सकता है या होता है। वीतरागता से ही सम्पूर्ण आपदाओं का अन्त होता है इसलिये मानना पड़ता है कि, सच्चा "सर्वोदय" कारी तो वीतराग महापुरुष ही होता है। परन्तु सभी वीतराग हो सकते हैं, संसार में अचेतन या जड़ पदार्थ जीव के आश्रय विना भी रह सकते हैं, परन्तु जीवात्मा विना जड़ के सहारे नहीं रह सकता है। शरीर भी जड़ ही है, शरीर के विना आत्मा संसार में नहीं रह सकता है। शरीर का नाम ही पर्याय है, और किसी न किसी पर्याय में ही जीव रहता है, इसलिये जड़ पदार्थ की शक्ति भी बड़ी प्रबल है, जड़ शक्ति आत्मा को परा भूत कर देती है–जड़ शक्ति से आत्मा का पराभव ही संसार है। जितने-जितने अंशों में ही "सर्वोदय" मन्द दशा में पहुँच

जाता है। सर्वोदय के निकट मानव तभी पहुँच सकता है जब कि वह अपने व्यक्तिगत या अन्य किसी स्वार्थ के लिये प्राणियों का घात नहीं करता है। मानव के भोजन के लिये जब निर्जीव अचेतन पदार्थ विद्यमान हैं, तब किसी जीव की हिंसा करना या दूसरे के द्वारा हिंसा होने पर उसे खाना "सर्वोदय" कहाँ हुआ? जो मानव होकर भी केवल अपना हित चाहता है, और अपने हित के लिये पशु-पक्षियों की हत्या करे या उन्हें खावे या जो ऐसी हिंसा करते-कराते हैं उन्हें "सर्वोदयी" मानें, उसे वास्तविक अर्थ में कभी 'सर्वोदय" नहीं कहा जाता है। किसी प्राणी को अपने हाथ से मारना ही अपराध नहीं, किन्तु अनुमति देनेवाला, विक्रय करने वाला अपराधी है और हिंसा से निष्पन्न पदार्थों का उपयोग करना, हिंसित प्राणियों को खाना, हिंसा करना, हिंसा के किसी भी निमित्त में सहयोग देना आदि सभी महान् अपराध हैं।

सबसे बड़ा और सच्चा "सर्वोदय" यही है कि "जीवो और दूसरों को जीने दो" इस सिद्धान्त की रक्षा और पालना तभी हो सकती है जब कि हम अपनी जीवन-चर्या ही ऐसी नियमित बनावें, जिसके निर्वाह के लिये हम इस प्रकार की प्रवृत्ति बनावें कि हम अधिक से अधिक जीव-रक्षा कर सकें। मांस मद्यादि का त्याग, रात्रि-भोजन का त्याग, जल छानकर पीना आदि जो कुछ क्रियाओं को कठोरता और दृढ़ता से पालन करते हुए इनके अलौकिक गुणों और प्रसादों का जनता में प्रचार

करना चाहिये । यदि हम अपने स्वार्थ के लिये पशु-पक्षियों को सताकर उनकी निर्बलता से अनुचित लाभ उठावें तो हमारी निर्बलता से दूसरे सबल लाभ न उठावें, यह कैसे हो सकता है? एक निर्बल और एक सबल है । यदि यों एक निर्बल दूसरे सबल का स्वार्थ-पोषक बनता रहा तो "सर्वोदय" होगा या "सर्व-घातक" यह स्वयं अपने हृदय से पूछिये ।

प्रस्तुत-पुस्तक में हमने इन्हीं सम्पूर्ण पहलुओं पर दृष्टिकोण रखते हुये ललित पद्यों में अपने सहृदयी "सर्वोदय-समाजी" सज्जनों के समक्ष "समीचीन सर्वोदय समस्याऐं" प्रस्तुत की हैं, और जहां तक हुआ यही दृष्टिकोण रखा है कि "सर्वोदय" का आशय कितना महत्व पूर्ण है—कितना विशाल है किन्तु, आज उसकी सीमा को संकीर्ण बनाकर उसके महत्व को छोटे से मूल्य में अंकित कर संकुचित और स्वार्थपूर्ण दीवारों के अन्दर ही जकड़ कर उसको विषम बनाया जा रहा है । इन्हीं सम्पूर्ण विषयों पर तुलनात्मक प्रकाश डाला है, आशा है कि एक बार हमारे सहृदय बन्धु शांति पूर्वक अद्योपान्त पढ़कर सत्यासत्य का निर्णय कर समीचीन मार्ग का अवलम्बन कर आत्म कल्याण करेंगे, यही आरम्भिक निवेदन है ।

साहित्य-भवन
नयापुरा
उज्जैन

आपका:—गुणानुरागी
छोटेलाल बरैया
(आमोल-निवासी)

समीचीन

सर्वोदय

अनेक ट्रैक्टों और इस समीचीन-सर्वोदय-काव्य के सफल निर्माता
विनोद-रत्न, व्याख्यान-भूषण श्री पंडित छोटेलालजी वरैया उज्जैन (म. भा.)

* अनेकान्तायनमः *

समीचीन-सर्वोदय

(काव्य)

प्रथम सर्ग

(१)

प्राच्य-सर्वोदय

विषय-प्रवेश
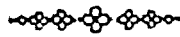
(१)

जिनके वदन से अवतरी वाणी सरस सुख कारिणी।
सुख-शान्ति समता दायिनी अरु सब अमङ्गल हारिणी॥
वह वचन गंगा नय तरंगित स्याद्वादमय गम्भीर है।
उनके चरण में भक्ति वश हो नमत त्रिविधि शरीर है॥

(२)

हे पतित पावन! हितैषी, भारती!! भय हारिनी!!!
तू पतित-पावन! जगत में अखिल भुवि उद्धारिनी॥
तेरी सरस धारा जगत में विविध तीरथ बन रहे।
आकर चरण की शरण तेरे विषम-भव-दधि तर रहे॥

(३)

ध्याते अहर्निश राज-ऋषि तेरे युगल पद भाव से।
धरते हृदय में ध्यान तेरा मुदित मन अति चाव से ॥
तूंने किया उद्धार उनका जिन शरण तेरी गही।
इस क्लेशमय भव-सिन्धु से उनकी अवधि थोड़ी रही ॥

(४)

तू तरण तारण ! सत् बनो इस दुख भरे संसार में।
तेरा सहारा ही उन्हें जो डूबते मँझधार में ॥
तेरा उदय है विश्व में, तू मात विश्वोदय बनी।
तेरी प्रभा की रश्मियाँ संसार में फैलीं घनी ॥

(५)

वे रश्मियाँ इस लोक के सम्पूर्ण प्राणी मात्र को।
देतीं सदा सुख-शान्ति करुणा ज्यों उदर के भ्रातृ को ॥
नहिं है हृदय संकीर्ण जिनका वे, महा गम्भीर हैं।
जल-थल-विविध-पक्षी-पशूओं, की मिटाती पीर हैं ॥

(६)

वे नहीं कुछ भेद रखतीं दुखित-जीवरु जन्तु से।
राग उनके है नहीं कुछ धनिक-साधू सन्त से ॥
इसलिये उनका मनोहर नाम "सर्वोदय"१ कहा।
यह तीर्थ पावन बनगया संसार-दुःख इससे दहा ॥

---

१ *सर्वांतवत्तद्गुणमुख्य कल्पं, सर्वांत शून्यं च मिथोऽनेपक्षम् ।*
सर्वापदामन्तकरं निरन्तम्, "सर्वोदयं" तीर्थमिदंतवैव ॥

भावार्थ-हे भगवन् ! आपका ही यह धर्मतीर्थ "सर्वोदय" सर्व अभ्युदयकारी है अन्य का नहीं, क्योंकि गौण-मुख्य आदि सर्व-धर्मात्मक

यह तीर्थ सर्वोदय जगत का एक-मात्र अधार है।
संसार के सम्पूर्ण तीर्थों में यही इक सार है॥
इस तीर्थ में स्नान कर तिर्यञ्च१ भी ईश्वर२ बने।
परमात्म पद पाकर स्वयं बहु जीव उद्धारे घने॥

और परस्पर निरपेक्ष होने से शून्य भी है। हे भगवन्! आप का यह तीर्थ समस्त आपत्तियों का अन्त करनेवाला और स्वयं भी अन्त रहित है।

१ सुलझे पशु उपदेश सुन सुलझें क्यों न पुमान ?
नाहर ते भये वीर जिन गज पारस भगवान्॥
(बुधजन सतसई)

२ भगवान महावीर स्वामी के पूर्व भवोंपर दृष्टिपात करनेसे विदित होता है, कि एक बार वे भयंकर सिंहकी पर्यायमें थे, और एक मृगको मारकर भक्षण करनेमें ही तत्पर थे. कि महर्षि अमितकीर्ति और अमितप्रभ नामक दो सर्वोदय के महान साधक सन्तों के आत्मतेज तथा ओजपूर्ण वाणीने उस सिंहकी स्वाभाविक क्रूरताको धोकर उसे प्रेम और करुणा की प्रतिकृति बना दिया।

महाकवि "अशग" के शब्दों में ऋषिवर "अमितकीर्ति" ने उस मृगेन्द्र को शिक्षा दी थी कि" "स्व सदृशान् अवगम्य सर्वसत्वान्" अपने सदृश सम्पूर्ण प्राणियोंको जानते हुए "प्रशमरतो भव सर्वथा मृगेन्द्रः" हे मृगेन्द्र! तू क्रूरता का परित्याग कर और प्रशान्त बन। अपने शरीरकी ममता दूर कर अपने अन्तःकरण को दयार्द्र कर "त्यज वपुषि परां ममत्वबुद्धिं। कुरु करुणार्द्रमनारतं स्वचित्तम्"

उनने यह भी समझाया, कि यदि तूने संयमरूपी पर्वतपर रहकर परिशुद्ध दृष्टिरूपी गुहामें निवास किया तथा प्रशान्ति परिणति रूप

(८)

इस तीर्थ में कल्याण की धारा अहर्निश वह रही।
संकीर्णता या विषमता इसमें न किञ्चित है कहीं॥
सम्पूर्ण प्राणी मात्र को इस तीर्थ में स्थान हैं।
मानव–पशु–जल–जन्तु पर भी दृष्टि एक समान हैं॥

अपने नखोंसे कषायरूपी हाथियोंका संहार किया, तो तू यथार्थ में "भव्य सिंह" पद को प्राप्त करेगा। यथा

यदि निवससि संयमोन्नताद्रौ प्रविमलदृष्टि गुहोदरे परिघ्नन्।
उपशमनखरैः कषायनागांस्त्वमसि तदा खलु सिंह! भव्यसिंहः

(महावीर चरित्र ११ सर्ग ३८)

इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी कहा कि:—

अनुपमसुखसिद्धिहेतुभूतं गुरुषु सदा कुरु पंचसु प्रणामम्।
भवजलनिधेः सुदुस्तरस्य प्लव इति तं कृतबुद्धयो वदन्ति॥ ४३

(महावीर चरित्र)

अर्थात्:—हे सिंह श्रेष्ठ! तू पञ्चपरमेष्ठियोंको सदा प्रणाम कर। यह नमस्कार उपमातीत आनन्द प्राप्तिका कारण है और सत्पुरुष उसे इस दुस्तर संसार सिन्धु संतरण निमित्त नौका सदृश बताते हैं।

इस दिव्य उपदेशसे वह सिंह जो पहले "यम इव कुपितो विना निमित्तं" अकारण ही यमकी भांति क्रुद्ध रहता था, वह परम दया की मूर्ति बन गया और उसे जातीस्मरण होने से उस अहिंसा मय उपदेश सुन उस सिंह के आंखों से अविरल अश्रु धारा वह पड़ी। सम्यक्दर्शन प्राप्त होने से निराहार व्रत स्वीकार किया। इस अहिंसाकी आराधना द्वारा प्रवर्धमान होते हुए दसवें भवमें वह जीव (सिंह) वर्द्धमान–महावीर नामक महा प्रभू के रूप में उत्पन्न हुआ। उस अहिंसक सिंह ने शनैः शनैः

भगवान महावीर के दसवें भव की सिंह पर्याय का एक दृश्य

[illegible]

इन महर्षियों के उस दिव्य उपदेश से वह सिंह जो पहले अकारण ही यम की भांति क्रुद्ध रहता था, वह परम दया की मूर्ति बन गया, और उसे जाति-स्मरण होने से उस अहिंसा मय उपदेश को सुन उस सिंह की आंखों से अविरल अश्रु धारा बह पड़ी (पृ. ३-४ टिप्पणी १-२)

सुख–शान्ति–करुणा–दया–क्षमता मुख्य इसका धर्म है।
सर्वाङ्ग सम्पूरण "अहिंसा" १ का जहाँ सत् कर्म है ॥
सीमित नहीं है क्षेत्र इसका निहित–मर्यादा नहीं।
इस तीर्थ धर्म-स्थान का स्वामी न सेवक है कहीं ॥

त्रिकाश करते हुए तीर्थङ्कर भगवान महावीर के त्रिभुवन पूजित पद को प्राप्त किया।

उनके पूर्ववर्त्ती तीर्थङ्कर भगवान पार्श्वनाथ प्रभु ने मदोन्मत्त हाथी की पर्याय में महामुनि अरविन्द स्वामी के पास अहिंसात्मक और संयम पूर्ण जीवन की शिक्षा ग्रहण की थी। देखो पार्श्वपुराण।

"अब हरती संयम साधे। त्रस जीव न भूल विराधे ॥
सम भाव छिमा उर आनें। अरि-मित्र बराबर जानें ॥
काया कसि इन्द्री दण्डे। सहास धर प्रोपध मण्डे ॥
सूखे तृण पल्लव भच्छे। परमर्दित मारग गच्छे ॥
हाथीगन डोल्यो पानी। सो पीवें गजपति ज्ञानी ॥
देखे बिन पांव न राखे। तन पानी पङ्क न नाखे ॥
निज शील कभी नहिं खोवे। हथनी दिशि भूल न जोवे ॥
उपसर्ग सहे अति भारी। दुरध्यान तजे दुखकारी ॥
अघक भय अंग न हाले। दृढ़ धीर प्रतिज्ञा पाले ॥
चिरलों दुद्धर तप कीनों। बलहीन भयो तन छीनो ॥
परमेष्ठी परम पद ध्यावें। ऐसे गज काल गमावें" इत्यादि ॥

१ अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति।
तेषामेवोत्पत्तिर्हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः (पु० सि०)

(१०)

मानव-पशू-पक्षी सकल जल-जन्तु प्राणी मात्र को।
अधिकार सबको प्राप्त हैं माता-पिता-सुत-भ्रातृ को॥
उद्देश्य इसका है गहन को माप सकता मापको।
जो भूल बैठे थे उसे बतला रहा हूँ आपको॥

(११)

स्याद्वाद१ का यह दुर्ग है नय२ रूप मय द्वय द्वार है।
निरपेक्ष अरु सापेक्षता का जहँ भरा भण्डार है॥
है भेद भाव जहाँ नहीं पूरण अहिंसागार३ है।
राजा-प्रजा जल-जन्तु तक का पूर्ण हीं अधिकार है॥

भावार्थः—रागादि का अप्रादुर्भाव ही अहिंसा है यही सर्वोदय का सार हैं।

१· *अनेकान्तात्मकार्थकथनंस्याद्वादः* (लघीयस्त्रय)

भावार्थः—अनेकान्तात्मक-अनेक धर्म-विशिष्ट वस्तु का कथन करना स्याद्वाद है।

"स्याद्वादः सर्वथैकान्तत्यागात् किंवृत्तचिद्विधिः" (आप्तमीमांसा)

× × × ×

उपयोगौ श्रुतस्य द्वौ स्याद्वादनयसंज्ञितौ।
स्याद्वादः सकलादेशः नयो विकलसंकथा (६२) (लघीयस्त्रय)

× × × ×

२ *"प्रमाणप्रकाशितार्थविशेष प्ररूप को नयः"* (राजवार्तिकालङ्कार)

प्रमाण द्वारा प्रकाशित अर्थ को विशेष प्ररूपन करनेवाले ज्ञान को नय कहते हैं।

(१२)

हिंसा१ अहिंसा२ का प्रदर्शन जहाँ निरन्तर होरहा।
इसलिये ही नाम इसका ठीक "सर्वोदय" कहा॥
हिंसा अहिंसा किसे कहते ? ध्यान से पढ़ लीजिये।
सत्-असत् को समझ कर के भाव करुणा कीजिये॥

---

३ **भावार्थ**—पदार्थ उभय-धर्मात्मक है और उस उभय धर्मात्मक पदार्थ के विषय करने वाला तथा कहने वाला प्रमाण है, उन धर्मों में से एक धर्म को कहने वाला नय होता है।

अथवा-प्रमाण द्वारा ग्रहण किये हुए पदार्थ के एक धर्म को मुख्यता से जो अनुभव करता है वह नय है (पु० सि०)

× × × ×

१ *"प्रमत्तयोगात्प्राण व्यपरोपणं हिंसा" (भाष्यम्-प्रमत्तो यः कायवाङ्.मनो योगैः प्राणव्यपरोपणं करोति सा हिंसा)*

(सभाष्य तत्वार्थाधिगमसूत्रम्)

भावार्थ-जो कोई प्रमाद (असावधानी) से काय--वचन--मनो-योग के द्वारा प्राण व्यपरोपण (घात) करता है उसे हिंसा कहते है।

× × × ×

२ *यत्स्यात्प्रमादयोगेन प्राणिषु प्राणहायनम्।*
सा हिंसा रक्षणं तेषांमहिंसा तु सतां मत॥

(यशस्तिलक)

भावार्थ-असावधानी अथवा राग-द्वेष आदि के आधीन होकर जो जीव धारियों का प्राण-हरण किया जाता है वह हिंसा है।। उन जीवों का रक्षण करना सत्पुरुषों ने अहिंसा कहा है।

(१३)

मन-वचन-काय प्रमाद१ द्वारा अरु कषायों२ वश जहाँ।
प्राण३-व्यपरोपण४ जहाँ हो घोर हिंसा है वहाँ ॥
तीर्थ "सर्वोदय" बताता प्राण दोय प्रकार के।
द्रव्य-हिंसा-भाव-हिंसा का स्वरूप विचार के ॥

(१४)

पहले सुनो तुम भाव हिंसा जो स्वघातक है महा।
मनमें वचनमें-कायमें क्रोधादि होते हैं वहाँ ॥
उन कषायों से जहाँ पर भाव-परिणति घात हो।
भाव-हिंसा५ वह कहाती आपको संताप हो ॥

---

१ असावधानी २ क्रोध, मान, माया, लोभ। ३ १-स्पर्शन २-रसना ३-घ्राण ४-चक्षु ५-कर्ण ६-मन ७-वचन ८-काय ९-आयु १० श्वासोच्छ्वास ये दश प्राण हैं।

४ *"हिंसा मारणं प्राणातिपातः प्राणवधः देहान्तर-संक्रमण प्राण व्यपरोपणंमित्यनर्थांतरम्"*

(सभाष्य तत्वार्थाधिगम सूत्रम्)

भावार्थ-हिंसा करना, प्राणों का अतिपात-त्याग या वियोग करना, प्राणों का वध करना, देहान्तर को संक्रमण करा देना, भवान्तर गत्यन्तर को पहुँचा देना और प्राणों का व्यपरोपण (घात) करना इन शब्दों का एक ही अर्थ है।

५ जिस पुरुष के मनमें, वचन में, काय में, क्रोधादि कषाय प्रकट होते हैं, उनसे उसके शुद्धोपयोगरूप भाव प्राणों का घात तो पहले हैं, क्योंकि कषायों के प्रादुर्भाव से भाव प्राणों का व्यपरोपण (घातक) होता है उसे स्वभाव हिंसा कहते हैं। यह पहली हिंसा है।

(१५)

तीव्र उदय कषाय वश या दीर्घश्वासोच्छ्वास से।
या हस्त पादक आदि से, निज अङ्ग आदि विनाशसे॥
जब आत्मघात स्वयं करे तव द्रव्य प्राण१ विनाश हो।
क्रोधादिवश निज देह का निज से जहाँ पर नाश हो॥

(१६)

वश इसी को द्वितिय हिंसा तीर्थ कहता जोरसे।
पर-भाव हिंसा२ भी बतादूं ध्यान धरिये गौर से॥
होकर कषायों से विवश वच मर्म भेदी जो कहे।
या हँसी एसी करे जो प्राण पर पीड़ा लहे॥

(१७)

पर प्राण को कर संक्लेशित भाव-पर हिंसा करे।
यह तृतिय हिंसा जिन कही जो घोर दुःक्खों में धरे॥
चौथी कही पर-द्रव्य हिंसा३ जो कषायोद्रेक से।
प्राणियों का घात करता हाय! शस्त्र अनेक से।

---

१ जो कषाय की तीव्रता से, दीर्घ श्वासोच्छ्वास से, हस्तपादादिक से, वह अपने अंगों को कष्ट पहुँचाता है अथवा आत्मघात कर लेता है तब उसके द्रव्य प्राणों का व्यपरोपण होता है उसे दूसरी द्रव्य हिंसा कहते हैं।

२ जो कषायों के वशी भूत होकर वह दूसरे प्राणी से मर्म-भेदी खोटे वचन कहता है या इस ढंग की हँसी मजाक करता है जिससे उसके हृदय को गहरी ठेस लगे या, ऐसा और कोई कार्य करे जिससे दूसरे का अन्तरङ्ग पीड़ित होकर कषाय रूप परिणाम होकर उसके प्राणों का व्यपरोपण (घात) हो उसे परभाव हिंसा कहते हैं। यह तीसरी हिंसा है।

३ जो कषाय और प्रमादों के वश होकर किसी दूसरे जीव के शरीर

(१८)

यह कही पर-द्रव्य हिंसा ध्यान से पढ़ लीजिये।
हिंसा अहिंसा१ की परीक्षा शान्त मन से कीजिये॥
है अहिंसा२ विश्व में कल्याण–मंगल कारिणी।
संसार के उन प्राणियों को है भवोदधि तारिणी॥

को पीड़ा पहुँचाता है या उसके अंग आदि छेदता है या उसको प्राणान्त कर देता है। वह द्रव्यप्राण हिंसा कहलाती है। यह चौथी हिंसा का संक्षिप्त स्वरूप है।

१ *कर्मणा मनसा वाचा सर्वभूतेषु सर्वदा।*
अक्लेशजननं प्रोक्ता अहिंसा परमर्षिभिः (श्री भ० गीता)

भावार्थ-मन, वचन, काय से सर्वदा किसी भी प्राणी को किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं पहुँचाना इसीको महर्षियों ने अहिंसा कहा है।

२ *गिरिभित्यवदानवतः श्रीमत इवदन्तिनः अवद्दानवतः।*
तव शमवादानवतो, गतमूर्जितमपगतप्रमादानवतः॥

(श्री वृहद् स्वयंभू स्तोत्र)

भावार्थ–तार्तिक महाविद्वान स्वामी समन्त भद्र, भगवान महावीर स्वामी की स्तुति में कहते हैं कि प्रभो! आप दोषों के उपशम करने वाले शास्त्रों के रक्षक हैं, और प्रकृष्ट हिंसा के नाश होने से अहिंसा मई अर्थात अभयदान सहित आपका विहार इस पृथ्वी पर उसी तरह हुआ, जिस प्रकार एक भद्र और शुभ लक्षणों युक्त मदमत्त हाथी की गति होती है। दूसरे शब्दों में कहें तो इसका भाव यही है कि भगवान महावीर के सदुपदेश से मुमुक्षुओं को "सत्य" के दर्शन होगये थे। और उनके धर्म प्रचार से हिंसा वादी मत–प्रवर्तकों का अभाव होकर प्राणियों को सुख और शांति का लाभ हुआ था।

(१६)

हिंसा१ किसे कहते जरा अब ध्यान से पढ़ लीजिये।
उसका स्वरूप यथार्थ लख के दूरसे तज दीजिये॥
नाम हिंसा शब्द का है अर्थ घातकर२ तीर्थ में।
यह घात दोय३ प्रकार का है तीर्थ की अपकीर्ति में॥

(२०)

आत्म-घात कहा प्रथम पर घात पुन दूजा कहा।
इसका स्वरूप यथार्थ देखो तीर्थ यों बतला रहा॥
जो कषायों४ से विवश हो निज स्वरूप विरक्त हो।
उसकाल में उस आतमा की घात में अनुरक्त हो॥

---

१ *सा हिंसा व्यपरोप्यंते यत् त्रस स्थावराङ्गि नाम्।*
प्रमत्तयोगतः प्राणा द्रव्य-भाव-स्वभावकाः॥

(अनागार धर्मामृत)

भावार्थ-क्रोध, मान, माया, लोभ के आधीन होकर या अयत्नाचार के मदमें मन, वचन, काय से त्रस जीवों के-मनुष्य, पशु, पक्षी, आदि स्थूल जन्तुओं के-वा स्थावर जीवों के-हवा, पानी, फल आदि में रहने वाले सूक्ष्म जन्तुओं के-द्रव्यप्राण-या भावप्राणों के घात करने को हिंसा कहते हैं।

२ "*यस्मात् कषायः सन्हन्त्यात्मा प्रथममात्मनात्मानम्*" (पु०सि०)

भावार्थ-क्योंकि जीव कषाय भावों सहित होने से पहले आपके ही द्वारा आपको घातता है बस इसी घातको आचार्यों ने सूक्ष्म हिंसा कहा है।

३ एक आत्मघात दूसरा परघात।

४ जिस समय आत्मा में कषाय भावों की उत्पत्ति होती है उसी समय आत्मघात होजाता है उसे आत्मघात नामक हिंसा कहते हैं।

(२१)

आत्म-घाती नाम हिंसा तीर्थ ने उसको कहा।
पर-घात१ नामक रूप हिंसा तीर्थ यों बतला रहा॥
उस कषायोद्रेक से पर जीव-वध की भावना।
होती हृदय में जब सृजन दुर्गति मई दुख कामना॥

(२२)

उसकाल में वह भावना हिंसक मई उत्पन्न हो।
पर जीव वध हो या न हो लेकिन हृदय अतखिन्न हो॥
वह खिन्नता ही स्व-पर घातक तीर्थ ने हिंसा कही।
ध्यान से पढ़िये इसे क्या सूक्ष्म तत्व बता रही॥

(२३)

पर घात रूपी नाम हिंसा दोय भेद स्वरूप है।
अविरमण औ परिरमण रूप स्वरूप रूप अनूप है॥
अविरमण रूपी नाम हिंसा को यहाँ पढ़ लीजिये।
इसका स्वरूप यथार्थ लखके भाव करुणा कीजिये॥

---

१ *"पश्चाज्जयते न वा हिंसा प्राण्यन्तराणां तु"*

आत्म घात हिंसा होने के पश्चात् यदि अन्य जीवों की आयु पूरी हो गई होवे अथवा पापका उदय आगया होवे तो उनका भी घात हो जाता है, अन्यथा आयुकर्म पूरा न हुआ होवे, पापका उदय न आया होवे, तो कुछ भी नहीं होता, क्योंकि उनका घात उनके कर्मों के आधीन है, परन्तु आत्मघात तो कषायों की उत्पत्ति होते ही हो जाता है अतः आत्मघात व परघात दोनों ही हिंसा है।

(२४)

पर जीव के वध की प्रवृत्ति[१] तो हृदय में है नहीं।
किन्तु हिंसा-त्याग का व्रत जिन कभी लीना नहीं।
बिन त्याग के निज आत्म में हिंसामयी अस्तित्व है।
इसलिये वह अविरमण हिंसा सदा अव्यक्त है॥

(२५)

अव्यक्त रूपी भाव ही विन त्याग हिंसा रूप है।
सर्वोच्च सर्वोदय जगत में त्याग हित मित-रूप है॥
अब परिरमण[२] हिंसा सुनो मन-वचन और प्रमाद से।
परघात में जो हो प्रवृत्ति जीवको आह्लाद से॥

---

१ जो जीव की घात में प्रवृत न होने पर भी हिंसा त्याग की प्रतिज्ञा के बिना हुआ करती है। यहां कोई यह कहे कि क्रिया के बिना ही यह हिंसा क्यों होती है? उसका उत्तर इस प्रकार है कि जिस पुरुष के हिंसा का त्याग नहीं है वह यद्यपि किसी समय में हिंसा में भी प्रवृत्ति नहीं करता, परन्तु उसके अंतरंग में हिंसा करने का अस्तित्व भाव का सद्भाव है इसलिये उसे अविरमण हिंसा कहा है।

२ जबतक प्रमाद पाया जाता है तबतक हिंसा का अभाव किसी भी प्रकार नहीं हो सका क्योंकि प्रमाद योग में सर्वकाल पर जीव की अपेक्षा भी प्राण घात का सद्भाव होता है। अतएव प्रमाद के परिहारार्थ पर जीवों की हिंसा के त्याग में दृढ़ प्रतज्ञ होना चाहिये जिससे दोनों प्रकार की हिंसाओं से बचा रहे।

(२६)

इसको कहा पररमण हिंसा ये प्रमाद सयुक्त है ।
जब तक प्रमाद रहे हृदय में वह सदा उन्मुक्त है ॥
इसलिये निज आत्म से हिंसा सदा हीं त्यागिये ।
करुणा मयी निज-सरस-रस से आत्म को शुभ पागिये ॥

(२७)

हिंसा१ सहित परिणाम हीं तो अति भयङ्कर रूप है ।
जीव वध हो या नहो परिणाम विकृत रूप है ॥
उनके भयङ्कर पाप शिरपर छा रहे हिंसा भरे ।
इसलिये तजिये इन्हें ये भाव दुर्गति ले धरे ॥

(२८)

एक२ करता पाप हिंसा वहुत जन फल भोगते ।
किन्तु वहुजन३ करतहिंसा एक फल को भोगते ॥
परिणाम मय इस न्यायको यह तीर्थ वतलाता हमें ।
इसलिये इस तत्व को हम आज वतलाते तुम्हें ॥

---

१ *"अविधायापि हि हिंसा हिंसा फल भागनं भवत्येक"*

जिसके परिणाम हिंसा रूप हुए, चाहे वे (परिणाम) हिंसा का कोई कार्य न कर सके तो भी वह हिंसा के फल को भोगेगा ।

२ *"एकः करोति हिंसां भवति फल भागीनो वहवः"*

भावार्थ-कहीं एक पुरुष हिंसा को करता है परन्तु फल भोगनेवाले वहुत होते हैं-जिसे कहीं कहीं दशहरे पर भैंसे को मारता तो अकेला है अथवा फांसी पर लटका कर मारनेवाला तो अकेला है परन्तु अन्य सर्व देखनेवाले जो "अच्छा-अच्छा" कहते हैं और प्रसन्न होते हैं वे अपने-अपने रुद्र परिणामों के कारण हिंसा के फल के भागी होते हैं ।

(२६)

परिणाम१ वस वह एक हिंसा एकको दुख रूप है।
परिणाम वस वह एक हिंसा काटती भव कूप है॥
इसलिये इस तीर्थ में इसका विशद२ वर्णन किया।
सन्न्याय और प्रमाण से स्पष्ट ही वतला दिया॥

---

३ वहवो विंदधाति हिंसा हिंसा फल भुग्भवत्येकः"

भावार्थ-हिंसा करने वाले तो बहुत पुरुष हैं किन्तु हिंसा के फल का भोक्ता एक ही पुरुष है। जैसे संग्राम में हिंसा तो बहुत से योद्धा करते हैं परन्तु उनका स्वामी राजा उस हिंसा के फल का भागी होता है।

१ एकस्यापि दिशाति हिंसा हिंसा फलमेकमेवफलकाले।
अन्यस्य सैव हिंसा दिशत्य हिंसा फलं विपुलं॥

भावार्थ-किसी पुरुष को तो हिंसा उदय काल में एक ही हिंसा के फल को देती है, और किसी पुरुष को वही हिंसा बहुत से अहिंसा के फल को देती है। जैसे किसी वन में मुनिराज (संत) ध्यान अवस्था में तिष्ठते हैं, एक सिंह महा क्रूर परिणामी उनको भक्षण करना चाहता है, इतने में एक शूकर कौमल अहिंसामयी परिणामों को लिये हुये सिंह से मुनिराज की रक्षा करना चाहता है। सिंह और शूकर दोनों लड़-लड़ कर मर जाते हैं। सिंह अपने क्रूर परिणामों के कारण हिंसा करते हुए नरक में जाता है। शूकर उसी हिंसा को करते हुए शुभ भावों के निमित्त से स्वर्ग जाता है।

२ इति विविधभङ्गगहने सुदुस्तरे मार्गमूढ़ दृष्टिनाम्।
गुरवो भवन्ति शरणं प्रबुद्धनयचक्र सञ्चारा॥

भावार्थ-इस प्रकार अत्यन्त कठिन नाना प्रकार भंगरूप गहन वन में मार्ग-मूढ़-दृष्टि पुरुषों को (मार्ग भूले हुए पुरुषों को) अनेक

(३०)

हिंसा अनेक प्रकार है उसको समझिये ध्यान से।
वस्तु के विज्ञान को मत भूलिये अज्ञान से॥
सर्वोच्च सर्वोदय कथित नय-चक्र१ और प्रमाण से।
इस तीर्थ का यह नय तरङ्गित आज है विज्ञान से॥

(३१)

इसलिये संवेग जनको हिंस्य२-हिंसक३-भावको।
हिंसा४ तथा फल५ और हिंसा को समझिये चावसे॥
यह जानकर निजशक्तिसम६ कर त्याग अनुभव कीजिये।
सर्वोच्च सर्वोदय सरोवर का सरस जल पीजिये॥

प्रकार के नय समूँह को जाननेवाले श्री गुरु ही शरण होते हैं और वे ही हिंसा के अनेक भेदों को समझा सक्ते हैं जो नयचक्र के अच्छे ज्ञाता हैं।

१ *अत्यन्तनिशितधारं दुराशदं जिनवरस्य नयचक्रम्।*
खण्डयति धार्यमाणं मूर्धानं झटिति दुर्विदग्धानाम्॥

भावार्थ-जिनेन्द्र भगवान का अत्यन्त तीक्ष्णधारवाला और दुःसाध्य नयचक्र धारण करनेवाले अज्ञानी पुरुषों के मस्तकों को शीघ्र ही खन्डन करता है अर्थात् सर्वोदय के नयभेद समझना बहुत कठिन हैं, जो कोई मूढ़ पुरुष बिना समझे नयचक्र में प्रवेश करता है वह हिंसा के स्वरूप में मन माना करता है वह लाभ के बदले हानि उठा कर सर्वोदय का मुख कलंकित करता है।

२ हिंस्य-जिनकी हिंसा की जावे, ऐसे अपने, अथवा पर जीव के द्रव्य-प्राण और भाव-प्राण अथवा एकेन्द्रियादिक जीव समास।

३ हिंसक-जो अपने मनमें दूसरों को मारने या दुःख देने का वचार करता है, मुख से अप शब्द कह कर दूसरों का दिल दुखाता है या

(३२)

इस अहिंसासे१ हुआ है विश्व का उद्धार है।
हे अहिंसे२ ! जगत जननी वन्दना शतवार है॥
तेरे सिवा भव-सिन्धु से हा! कौन करता पार है।
इसलिये हमको तुम्हारा एक-मात्र अधार है॥

(३३)

इस परम पावन तीर्थ का तूने किया उद्धार है।
यह तीर्थ सर्वोदय जगत में इसलिये सुखकार है॥
इसका सरस इतिहास हमको सुखद पथ बतला रहा।
शान्ति से पढ़ लीजिये जो तीर्थ सर्वोदय कहा॥

हस्त आदि यंत्रों द्वारा दूसरों पर वार करता है वह हिंसक कहा जाता है।

४ हिंसा—हिंस्य के प्राण पीड़न की अथवा प्राणघात की क्रिया।

५ हिंसाफल—हिंसा से प्राप्त होनेवाले नरक निगोदादिक फल।

६ "निजशक्त्या त्यज्यतां हिंसा"—अर्थात अपनी शक्त्यानुसार हिंसा अवश्य छोड़नी चाहिये।

१ "अहिंसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्मपरम्"

(स्वयम्भूस्तोत्र)

२ महाभारत—(स्त्री ०१०।२५।२८) में अहिंसा पालन करने के भाव का फल एक हजार यज्ञ करने का फल है ऐसा लिखा है। तथा मनुस्मृति (५।४५) हिन्दू पद्मपुराण (अ० २८०) भागवत (७।१५।७।१६) वैशेषिक सूत्र (७) वराह पुराण (८।१३२) कूर्म पुराण (अ. १६) देखिये अहिंसा के विषय में क्या लिखते हैं?

इति प्रथम सर्गः

द्वितीय-सर्ग

प्राच्य-सर्वोदय

की

महत्ता

(१)

अब लिखू इतिहास में इस तीर्थ के साम्राज्य का।
को नाम जानत है नहीं उन भरत से सम्राट का॥
उनके पिता श्री वृषभ स्वामी आदि ब्रह्मा अवतरे।
विश्वके थे प्रजा-पालक प्रजाहित जिन चित धरे॥

(२)

थे अहिंसा के पुजारी विश्व के महाराज थे।
थे गृहस्थागार में सब ही अहिंसा साज थे॥
शिक्षा[१] प्रजा को दो सभी, इस तीर्थ के उद्देश्य की
किन्तु फिर भी थे अहिंसक रक्षा करी उद्देश्य की॥

---

१ असिर्मषिः कृषिर्विद्या वाणिज्यं शिल्पमेव च।
कर्मणोमानि षोढा स्युः प्रजा जीवन हेतव॥ (आ पु. प. १६)
भावार्थ प्रजा के जीवन निमित्त भगवान् आदिनाथ प्रभू गृहस्थों

(३)

क्षत्रियों को शस्त्र विद्या जिन पढ़ाई प्रेम से।
इस तीर्थ के उद्देश्य का पालन करो व्रत-नेम[१] से॥
मत दीन दुखियों पर चलाओ अस्त्र निज संसार में।
शक्ति अपनी को लगादो देश के उद्धार में॥

(४)

दुष्ट[२]-निग्रहहेतु तुम निज अस्त्र-शस्त्र सँभाललो।
निज देश के कुल कण्टकों को देश बाहरटालदो॥
नित दीन-साधु-सन्त की रक्षा करो निज शस्त्र[३] से।
सज्जन जनो से प्रेम कर वात्सल्य पूरण चित्त से॥

को शस्त्र विद्या, लेखन विद्या, कृषि विद्या, वाणिज्य सांगीत और शिल्प की शिक्षा दी थी।

प्रजापतिर्यः प्रथमंजिजीविषुः शशास कृष्यादिषु कर्म सु प्रजाः २ ३
बृहद्स्वयंभूस्तोत्र

स्वामी समन्तभद्र के शब्दों में उन्होंने अपनी प्यारी प्रजा को कृषि आदि द्वारा जीविका की शिक्षा दी थी।

१ निरर्थकवधत्यागेन क्षत्रिया व्रतिनो मताः। (यशस्तिलके)

एक अहिंसक गृहस्थ बिना प्रयोजन, इरादापूर्वक तुच्छ से तुच्छ प्राणी को कष्ट नहीं पहुँचाएगा, किन्तु कर्तव्यपालन, धर्म तथा न्याय के परित्राण-निमित्त वह यथावश्यक अस्त्रशस्त्रादिक का प्रयोग करने में भी मुख नहीं मोड़ेगा, शस्त्रोपजीवी क्षत्रियों को आचार्य सोमदेव ने अहिंसा का व्रती इसके द्वारा सिद्ध किया है।:-

१ "दुष्टनिग्रहःशिष्टप्रतिपालनं हि,- राज्ञो, धर्मः न तु मुण्डनं, जटाधारणं, च"   (सम्यक्त्वकौमदी) पृष्ठ १५

(५)

न्याय१ से शासन करो अन्याय-पथ पर मत चलो।
सम्राट भरत नरेश का शासन जरा तो देख लो॥

राज्ञो हि दुष्टनिग्रहः शिष्टपरिपालनं च धर्मः २

❀ ❀ ❀ ❀

न पुनः शिरोमुण्डनं जटाधारणादिकम् ३ (नी. वा. पृ. ४२)

❀ ❀ ❀ ❀

३ यः शस्त्रवृत्तिः समरेरिपुः स्याद् ,यः कण्टको वा निजमण्डलस्य
अस्त्राणि तत्रैवनृपाः क्षिपन्ति, न दीन कानीन शुभाशयेषु ॥

सर्वोदयी सदस्य उन पर ही शस्त्र प्रहार करते हैं, जो शस्त्र लेकर युद्ध में मुकाबला करता है, अथवा जो अपने मण्डल में कण्टक होता है, वह दीन-दुर्बल अथवा सद्भावना वाले प्राणियों पर शस्त्र प्रहार नहीं करता है उसीका नाम सर्वोदय व्रती है।

१ सर्वोदय (जैनधर्म) की दृष्टि में न्याय को धर्म समान महत्त्वपूर्ण कहा है। यथा

काम क्रोध मदादिषु चलयितु मुदितेषु वर्त्मनो न्यायात्।
श्रुतमात्मनः परस्य च युक्त्वा स्थितिकरणमपि कार्यं॥

स्वामी अमृत चन्द्राचार्य ने स्थितिकरण अङ्ग का वर्णन करते हुए बतलाया है कि "न्याय" मार्ग से विचलित होने में उद्यत व्यक्ति का स्थितिकरण करना चाहिये। अन्यान्य ग्रन्थकारोंने जहां धर्म शब्द का प्रयोग किया है वहां अमृतचन्द्रस्वामी ने "न्याय" न्याय शब्द को ग्रहण कर न्याय के विशिष्ट अर्थ पर प्रकाश डाला है। इसी प्रकार स्वामी समन्तभद्र द्वारा रत्नकरण्ड श्रावकाचार के १६ वे श्लोक में उल्लेख किया है।

अर्ककीर्ति नाम सुत को भरत ने दण्डित किया।
इस तीर्थ की रक्षा करी सन्न्याय का[१] परिचय दिया॥

१ एक समय महाराजा अकम्पन की पुत्री सुलोचनाका स्वयम्वर हो रहा था तब चक्रवर्ती भरतेश्वरके पुत्र अर्ककीर्ति ने उस कन्या का लाभ न होने के कारण निराश होकर बहुत गड़बड़ी की। दोनों ओर से रणभेरी बजी, युद्ध में सुलोचना का पति भरतेश्वर के सेनापति, जयकुमारकी विजय हुई। उस समय शांति स्थापित होनेपर महाराजा अकम्पनने सम्राट भरत के पास अत्यन्त आदरपूर्वक निवेदन प्रेषित करते हुए अपनी परस्थिति और अर्ककीर्ति की ज्यादती, साथ में यह भी लिखा कि मैं अपनी दूसरी कन्या अर्ककीर्ति को देने को तय्यार हूं। इस चर्चा को ज्ञात कर भरतेश्वर को अकम्पन महाराज पर किञ्चित भी रोष नहीं आया, प्रत्युतः अर्ककीर्ति के चरित्र पर भरतेश्वर को घृणा हुई और महाराजा अकम्पन के प्रति भरतेश्वर ने ये शब्द कहे।:-

गुरुभ्यो निर्विशेषास्ते सर्वज्येष्ठाश्च संप्रति ॥ ५१ ॥
गृहाश्रमे त एवार्च्यास्तैरेवाहं च वन्धुमान्-
निषेद्धारः प्रवृत्तस्य ममाप्यन्यायवर्त्मनि ॥ ५२ ॥
पुरवो मोक्षमार्गस्य गुरुवो दानसन्ततेः-
श्रेयांश्च चक्रिणां वृत्तेर्यथेहास्म्यहमग्रणीः ॥ ५३ ॥
तथा स्वयम्वरस्येमे नाभूवन् यद्यकम्पनाः-
कः प्रवर्तयितान्योऽस्य मार्गस्यैव सनातनः ॥ ५४ ॥
अर्ककीर्तिरकीर्तिर्मे कीर्तिनीयामकीर्तिषु ॥ ५५ ॥
उपेक्षितः सदोषोऽपि स्वपुत्रश्चक्रवर्तिना,-
इतीदमयशः स्थायि व्यधायि तदकम्पनैः ॥ ५६ ॥

(६)

धर्मायतन१ अर धर्म पर गर जो विपद आकर पड़े।
तब मंत्र-तंत्रिक आदि से ले शस्त्र जाकर के अड़े॥

इति संतोष्य विश्वेशः सौमुख्यं सुमुखं नयन् ,-
हित्वा ज्येष्ठं तुजं तोकमकरोन्न्याय मौरसम् ॥५७॥

महापुराण पर्व ४५

भावार्थ-महाराज के अकम्पन के दूत सुमुख से चक्रवर्ति भरतेश्वर ने अकम्पन की पूज्यता को इन शब्दों में प्रकाशित किया कि "अकम्पन महाराज तो हमारे पूज्य पिता भगवान ऋषभदेव के समान पूज्य हैं और आदरणीय हैं। अर्ककीर्ति वास्तव में मेरा पुत्र नहीं, न्याय मेरा पुत्र है। न्याय का रक्षण कर महाराज अकम्पन ने उचित किया। उन्हें बिना संकोच के अर्ककीर्ति को दण्डित करना था"। इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि "सर्वोदय" के आश्रय रहने वाले नरेश न्याय-देवता का परित्राण और कर्त्तव्य पालन में कितने अधिक तत्पर थे।

महाराजा सगर का, प्रजा को कष्ट देने के कारण अपने पुत्र असमंजस को निकाल देना प्रसिद्ध है। यथा

पौराणामहिते युक्तः पित्रा निर्वासितः पुरात् (वाल्मीकि)

१ *वत्सल्यं नाम दासत्वं सिद्धार्हद्विम्बवेश्मसु।*
सङ्घे चतुर्विधे शास्त्रे स्वामिकार्ये सुभृत्यवत्॥
अर्थादन्यतमस्योच्चैरुद्दिष्टेषु सुदृष्टिमान्
तत्सु घोरोपसर्गेषु तत्परः स्यात्तदत्यये॥
यद्वा न ह्यात्मसामर्थ्यं यावन्मन्त्रासिकोपकम्।
तावद् द्रष्टुं च श्रोतुं च तद्बाधां सहते न सः (पञ्चाध्यायी)

रक्षा करे निज शक्ति दे यह तीर्थ बतलाता हमें।
अब गृहस्थोचित अहिंसा भी बता देवें तुम्हें ॥

(७)

है असुविधा जनक जीवन देखलो सागार का।
आरम्भ–उद्यम अरु विरोध लगा हुआ संसार का ॥
इस विरोध निवारने को तीर्थ ने बतला दिया।
केवल तजो संकल्प हिंसा चतु[१]- विकल्पों को किया ॥

(८)

संकल्प हिंसा किसे कहते, अब सुनो मन थाम कर।
"आज मारूँगा इसे" वश यह इरादा ठान कर ॥
इस ही इरादे को कहा "संकल्प" तजने योग्य है।
आरम्भ–उद्यम अरु विरोधी भी निभाने योग्य है ॥

(९)

आरम्भ उद्यम तो गृहस्थों के हमेशा लग रहा।
यह प्राथमिकता का "सुदर्शन" तीर्थ ही बतला रहा ॥

भावार्थ-सिद्ध, अरिहन्त भगवान् की प्रतिमा, जिनमन्दिर, मुनि, अर्यिका, श्रावक, श्राविका रूप चतुर्विधि सङ्घ तथा शास्त्र की रक्षा, स्वामी के कार्य में तत्पर सुयोग्य सेवकके समान, करना वात्सल्य कहलाता है। इनमें से किसी पर घोर उपसर्ग होनेपर सम्यग्दृष्टि को उसे दूर करने के लिये तत्पर रहना चाहिये। अथवा अपनी जबतक सामर्थ्य है तथा मन्त्र, शस्त्र, द्रव्यका बल है तबतक वह तत्व-ज्ञानी उन पर आई हुई बाधा को न देख सकता है और न सुन सकता है। यही तो 'सर्वोदय' की महान् विशालता है।

१ चार प्रकार की हिंसा—१ आरम्भी२ उद्यमी३ विरोधी४ संकल्पी।

संकल्प इस में है नहीं मजबूर हो करना पड़े।
किन्तु हिंसा है मगर वह पाप वृत्ती से डरे॥
(१०)
पर-चक्र१ का हो आक्रमण तबही विरोध२ विचार हों।
किन्तु फिर भी टालने का राखते निजभाव हों॥

---

१ एक दफा गांधार देश के राजा सात्यक ने राजा श्रेणिक पर, पत्रलिख, उनसे दूत द्वारा कहला भेजा था कि:—

"with the reign of Bimbisara (582-554 B.C.) the Kingdom of Magadha entered upon that career of expansion which wal closed only with the conqucest of Kalinga Bay Asoka......The King of distant Candhara sent an emlassy to Bimbisara probably with the Obiect of invoking his assistance against the threatened advance of Achaemenid power. Modern Review. Oct., 1930 P. 438.

"भारत पर इस समय महा संकट के बादल उमड़ पड़े हैं, ईरानियों ने हम पर धावा कर दिया—हमारे अकेले के बूते का यह काम नहीं है कि हम उनको मार भगावें और स्वदेश की रक्षा करें, आइये! आप हमारा हाथ बटाइये' बस राजा श्रेणिक तय्यार होगये और ईरानियों को आगे न बढ़ने दिया, देश की रक्षा की। यह घटना ई॰ पू॰ छठी शताब्दी की अनुमान की जाती है।

२ इस विरोध प्रसंगमें अमेरिका के भाग्य-विधाता "अब्राहम-लिंकन" के ये शब्द विशेष उद्बोधक हैं कि, "युद्ध से मुझे घृणा है और मैं उससे बचना चाहता हूं। मेरी घृणा अनुचित महत्वाकांक्षा के लिये होने वाले युद्ध तक ही सीमित है। न्याय रक्षार्थ युद्ध का आह्वानन वीरता का

फेर भी आकर पड़े तो पूर्ण शक्ति विकाश कर।
न्याय-रक्षा के लिये सम्मुख खड़ा१ होकर निडर॥

परिचायक है। अमेरिकाकी अखण्डता के रक्षार्थ लड़ा जानेवाला युद्ध न्याय पर अधिष्टित है। अतः उससे मुझे दुख नहीं है।

युगधारा मासिक, मार्च ४८, ५२६,

बुद्धियुद्धेनपरं जेतुमशक्तः शस्त्र युद्धमुपक्रमेत्। (४) नीतिवाक्यामृते

जब एक शत्रु बुद्धि के युद्ध-तर्क याने समझाने से न जीता जा सके तो उसको जीतने के लिये शस्त्र-युद्ध करना चाहिये।

"दण्डसाध्ये रिपावुपायान्तरमग्नावाहुति प्रदानामिव"। ३९

(नीतिवाक्यामृते)

"यत्र शस्त्राग्निक्षारप्रतीकारे व्याधौ किं नामान्यौषधं कुर्यात्।

(नीतिवाक्यामृत-युद्धसमुद्देश्य)

अर्थात्-जो शत्रु केवल युद्ध करने से वश में आ सकता है उसके लिये अन्य उपाय करना अग्नि में आहुति देने के समान है। जो व्याधि यंत्र, शस्त्र या क्षार से ही दूर हो सकती है उसके लिये और क्या औषधि हो सकती है?

१ महात्मा बुद्ध कहते हैं कि:—

"स्वार्थ और अहँकार का पूर्णतया निरोधकर दुष्ट और पापीजनों की शक्तियों के सन्मुख आत्मसमर्पण कदापि न करे, इनसे सदा संग्राम करते हुये जीने की इच्छा करो। किन्तु हे सिंह! यह ध्यान में रखना चाहिये कि तुम्हारा संग्राम स्वार्थ, और द्वेष-लोभ और अभिमान की प्रेरणा से उत्तेजित न हो"।

(भगवान् बुद्धदेव-काशीनाथ कृत **पृष्ट १५७-१५८**)

(११)

यह विरोधी नाम हिंसा तीर्थ "सर्वोदय" कही।
इसको विवश१ करना पड़े नहीं टाल सक्ता है गृही२ ॥
मजबूरियां इसमें भरी पर, नीति का भी ध्यान है।
राष्ट्र-रक्षा, धर्म-रक्षा का जहां सम्मान है ॥

(१२)

दण्ड३-विधि का भी प्रदर्शन जहां अनूठा होरहा।
भेद-भावों से रहित निष्पक्ष हो वतला रहा ॥

---

१ गांधीजी ने भारतीय दृष्टिकोण का स्पष्टीकरण करते हुवे कहा था कि:—"All life in flesh exists by some voilence; hence the highest religion has been defined by a negative word, "Ahimsa"

Vide Amrit Bazar Patriksa, P. 7 & 8;
31-10-1940

अर्थात्-इस देह में जीव धारण करने में कुछ न कुछ हिंसा होती है, अतःश्रेष्ठ धर्म की परिभाषा में हिंसा न करने रूप निषेधात्मक अहिंसा की व्याख्या की गई है।

(देखिये अमृतबाजार पत्रिका पृष्ठ ७।८ ता० ३१।१०।४०)

२ भगवान् महावीर स्वामी ने अपने गृहस्थ अनुयायियों के लिये विरोधी हिंसा विधेय रक्खी थी, क्योंकि जगत में रहकर आत्म रक्षा आदि के लिये मनुष्योंको आततायी का मुकाबला करना ही होता है। गृहस्थों में भगवान् महावीर के प्रमुख उपासक राजा श्रेणिक, बिम्बसार और चेटक थे। इन्होंने लड़ाईयां लड़ी थीं, यह इतिहास प्रसिद्ध बात है।

३ "दण्डो हि केवलो लोकमिमं चामुं च रक्षति।
राज्ञा शत्रौ च पुत्रे च यथा दोषं समं धृतः" ॥ (सा० सू०)

दोषयुत निजपुत्र हो या शत्रु हो दण्डित करे।
इस दण्ड से इस लोक अरु परलोक की रक्षा करे॥

(१३)

इस दण्ड भय से देश में सुख शान्तिमय धारा बहे।
अन्याय मारग नष्ट हो अरु क्षेम शासन में रहे॥
"सर्वोदयी" वे तीर्थ करता१ इस प्रशस्त सुनीति का।
बतला रहे वे परम सुन्दर मार्ग-मात्र पुनीत का॥

भावार्थ-सर्वोदय तीर्थ के उपासक आचार्यकल्प पण्डित प्रवर आशाधरजी ने सागार धर्मामृत में इस दण्ड नीति को आवश्यक बतलाते हुए लिखा है कि "राजा के द्वारा शत्रु एवं पुत्र में दोषानुसार पक्षपात के बिना समान रूपसे दिया गया दण्ड इस लोक तथा परलोक की रक्षा करता है"।

१ भगवान वृषभनाथ तीर्थङ्कर सदृश अहिंसक संस्कृति के भाग्य विधाता महापुरुष ने दण्ड धारण करने वाले नरेशों की सराहना की है। कारण इसके आधीन जगत के योग्यऔर क्षेम की व्यवस्था बनती है। यथाः-

"दुष्टनां निग्रहः शिष्ट प्रति-पालनमित्ययम्।
नपुरासीत्क्रमो यस्मात्प्रजाः सर्वा निरागसः॥ २५१॥
दण्ड भीत्या हि लोकोयमपथं नानुधावति।
युक्तदण्डकरः तस्मात् पार्थिवः प्रथिवीं जयेत्॥ २५३॥
ततो दण्ड धरनेता ननु मेने नृपान् प्रभुः।
*तदायतं हि लोकस्य योग क्षेमानुचिन्तनम्॥*महापुराणपर्व १६

(१४)

"सर्वोदयी" सब ग्रन्थ इसका पूर्ण स्वागत कर रहे।
सन्याय१ दण्ड-विधान का उपदेश हमको दे रहे॥
बतला रहे उन नृपति२ की उस न्यायकारी नीति को।
निष्पक्ष हो, कर घोषणा, मेटी महा अनरीति को॥

(१५)

पूरण अहिंसा का जहाँ छाया हुआ साम्राज्य है।
अभिमान३-माया-लोभ-तृष्णा सर्वथा ही त्याज्य है॥

---

१ *"अपराधिकारिषुयथा विधि दण्ड प्रणे तृणां चक्रवत्यादीनाम्-अणुव्रतादि धारणं पुराणादिषु बहुशः श्रूयमाणं न विरुध्यते"*

("सागार धर्मामृत-भव्यकुमुदचन्द्रिका टीक")

अर्थात-अपराध करने वाले को यथा योग्य दण्ड देना, यह बात (भरत) चक्रवर्ती आदि के सम्बन्ध में पुराणों बहुधा सुनने में आई हैं और वे अणुव्रत के धारक थे। इसलिये दण्ड देने में न्याय पूर्वक जो प्रवृत्ति करता है उसका विरोध अणुव्रती के नहीं है।

भरत चक्रवर्ती के छहखण्ड जीतने का उल्लेख आदिपुराण पर्व २६ में है।

२ जैन कथानकों में सर्वोदयी अहिंसक न्याय की पुष्टि इस कथा से होती है कि एक राजाने घोषणा कर दी थी कि अष्टाह्निका नामक पर्व में आठ दिन तक किसी भी जीवधारी की हिंसा करनेवाला व्यक्ति प्राण दण्ड को पाएगा। राजा के पुत्र ने एक मेंढा को मार कर समाप्त कर दिया। राजाको पुत्र की हिंसकवृत्तिका पता लगा तब अपने पुत्र का मोहत्यांग कर जैन नरेश ने पुत्र के किये फांसी की घोषणा करदी।

३ *अभिमान-भय-जुगुप्सा-हास्य-रति-शोक-काम-कोपाद्याः*
हिंसायाः पर्यायाः सर्वेऽपि च सरकसन्निहिताः॥ ६४॥

इसकी प्रभाकी प्रखर ज्योति विश्व को आलोकती ।
आकृष्ट हो बनकर अहिंसक विश्व को संरोधती ॥

(१६)

जीव-हिंसा को बताया सर्वथा जहँ पाप है ।
प्राण-घातक महा हिंसा देत अति सन्ताप है ॥
"सर्वोदयी" वह ग्रन्थ भारत क्या हमें बतला रहा ।
शांतिपर्व निकाल देखो धर्म पर क्या कह रहा ॥

(१७)

लोभ१-माया से विवश हो मूक पशुओं को हने ।
भोग विषयों से विवश पर वेदना जो नहिं गिने ॥
निज स्वार्थ वश पर जीवकी हिंसा करें कह धर्म२ को ।
वह तीर्थ को बदनाम करता मेटता सत् कर्म को ॥

(पुरुषार्थ सिद्धयुपाय)

भावार्थ—अमृतचन्द्र स्वामी ने मान-माया-लोभ-शोक-भय घृणा-आदि को हिंसाका पर्यायवाची माना है, क्योंकि उनके द्वारा चैतन्य की निर्मलवृत्ति विकृत तथा मलिन होती है।

१ *लोभ माया विभूतानां नराणां भोगाकांक्षिणाम् ।*
एषां प्राणि वधे धर्मो विपरीता भवन्ति ते ॥

महाभारत-शांति पर्व :

लोभी, मायाचारी, कपटी और इन्द्रियों के विषयभोगी, लोलुपी मनुष्यों ने केवल अपने स्वार्थकेलिये जीवोंकी हिंसा में धर्म माना है, यह उनकी विपरीतता है।

२ कुछ बुद्धिमान मांसलोलुपी व्यक्तियों ने इस तथ्य का दुरुपयोग किया है, और उन्होंने "वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति" की ओट में

(१८)

धर्म की जड़ एक करुणा महाभारत में कही।
शेष-शाखाएँ इसी की मूल-यह दूजी नहीं॥
नाम करुणा है अहिंसा१ धर्म का यह तत्व है।
प्राणि-वध है घोर हिंसा कहे आगम सत्य है॥

पशु हत्या का बाजार गर्म कर दिया है कलकत्ते के कालीकेमन्दिर में प्रतिवर्ष लाखों बकरों की गर्दन काट काट कर देवी की भेंट चढ़ाई जाती हैं और उसे धर्म बतलाया जाता है। किन्तु लिखते हुए लेखनी थर्राती है कि बूचड़खानों में कसाई भी इतनीनिर्दयता से पशुओं को वध नहीं करता किन्तु यह धर्म स्थान है जहां पर धर्म के नामपर धर्म कहकर पशुओं का खून बहाया जाता है और उन बलिवेदी पर चढ़ाये गये पशुओं को स्वर्ग बतलाया जाता है इसी बात को लक्ष्य रखकर सर्वोदयी आचार्य देवसेन लिखते है कि:—

जइ देवो हणि उणं मंसं गसि ऊण गम्मए सग्गं।
तो णरयं गंतव्वं अवरोणिह केण पावेण॥ (भाव संग्रह)

यदि पशुको मारकर उसका मांस खाने से स्वर्ग मिलता है तो फिर नरक जाने के लिये कौनसा पाप करना चाहिए?

१ *अहिंसा सर्व भूतानां सर्वज्ञैः प्रतिभासि।*
इदं हि मूलं धर्मस्य शेषं तस्यैव विस्तरः॥
(महाभारत शान्तिपर्व)

समस्त जीवों की दया पालन करना, सबकी रक्षा अहिंसा है। यही सर्व धर्मों का मूल है, बाकी सब इसी धर्म (अहिंसा) का विस्तार है।

(१६)

सुन युधिष्ठर कृष्ण१ कहते ध्यान से इस बात को।
देता अभय जो प्राणियों रोक कर उन घात को॥
वह दान कञ्चन मेरु का या दान करदे सब मही।
किन्तु करुणा-दान की इस दानसे तुलना नहीं॥

(२०)

प्राणि-वध२ यदि धर्म है तो पाप फिर किसको कहें।
तप-त्याग-संयम-तीर्थ आदिक ये सभी निष्फल रहें॥
फिर क्यों तपश्चर्या करें? ऋषि, पाप से तर जांयगे।
संसार-बन्धन प्राणियों के पापसे कट जाँयगे॥

---

१ यो दद्यात्काञ्चनं मेरु कृत्स्ना चापि वसुन्धरम्।
एकोऽपि जीवितं दद्यात् न च तुल्यं युधिष्ठरम्॥
(महाभारत-शान्तिपर्व)

श्री कृष्णचन्द्र कहते हैं कि अर्जुन! किसी पुरुष ने मेरु पर्वत के समान सुवर्ण दान दिया, तथा समस्त द्वीपों की पृथ्वी दान देदी, किन्तु किसी दूसरे पुरुष ने यदि किसी एक प्राणी को अभयदान दिया अर्थात् मरने से बचाया, जीवदान दिया तो उस स्वर्ण-दान या पृथ्वी-दान देनेवालों का पुण्य जीव-दान देनेवाले के बराबर नहीं होता।

२ "जइदेवो हणिऊणं मंसं गसऊण सम्मए सग्गं,।
तोणरयं गंतव्वं अवरेणिहि केण पावेण"॥
(भाव संग्रह)

"He who takes life, whose mouth is full of lies who steals, and fouls another's wife A slave to

(२१)

इसलिये हिंसा भयङ्कर ही महा इक पाप है।
इससे विवश प्राणी सदा पाता महा सन्ताप है॥
तीर्थ "सर्वोदय' इसी की घोर निन्दा नित करे।
करता समर्थन दया की जो चित्त में करुणा धरे॥

(२२)

जिसका हृदय उन प्राणियों पर भर रहा करुणा१ मई।
ज्ञानी वही, ध्यानी वही, उनके निकट है शिव-मही॥
उनके लिये भस्माम्बरादिक की जरूरत है नहीं।
इस तीर्थ की शुभ-रश्मियाँ आदर्श निज बतला रहीं॥

---

drink, he even in this life The root of his own fortunes undermined" "246. 7.

—Dhammapada.

भावार्थः-जो प्राणियों के प्राण लेकर हिंसा करता है, झूठ बोलता है, चोरी करता है, व्यभिचार करता है और मद्य पीता है, वह इस जीवन में ही अपने आपका सत्यानाश कर लेता है।

१ *यस्य चित्तं द्रवीभूतं कृपया सर्व जन्तुषु ।*
तस्य ज्ञानं च मोक्षं च किं जटा भस्म चीवरैः॥

(महाभारत-शान्ति पर्व)

जिसका हृदय प्राणिओं में होने वाली दया द्वारा द्रवीभूत है-कोमल है, उसीको ज्ञान की प्राप्ति होती है और उसीको मोक्ष की प्राप्ति होती है। ज्ञान और मोक्ष के लिये जटाओं का बढ़ाना, शरीर में भस्म लगाना तथा गेरुआ आदि रँगों के वस्त्र धारण करने की आवश्यकता नहीं है।

(२३)

जो चक्र-भाला-यन्त्र से पर प्राणियों के प्राण को।
घात करता हो निठुर वह भूल कर निज ज्ञान को॥
निज पैर में काँटा चुभे[१] तब वेदना का ध्यान हो।
निजपीर सम पर वेदना का तब उसे कुछ ज्ञान हो॥

(२४)

यह तीर्थ रत्नाकर महा इसमें अनूठे रत्न हैं।
मिलते उन्हें वे रत्न अनुपम जो करें सद्यत्न हैं॥
संक्षिप्त में यह तो अहिंसा की महत्ता, मैं कही।
सत्य अरु आचौर्यता भी तो अभी बाकी रही॥

(२५)

औ सुशील अपरिगृहीता सब इसीके अङ्ग हैं।
इस तीर्थ के ये शेष गुण इससे न दूर अभङ्ग हैं॥
इस तीर्थ में इन शेष गुण का भी प्रमुख स्थान है।
इसके बिना इस तीर्थ का होता नहीं उत्थान है॥

---

१ कंटकेनापि विद्धस्य महती वेदना भवेत्।
चक्र-कुंतासिशक्त्यद्यैः छिद्यमानस्य किंपुनः॥
(महाभारत-शान्ति पर्व)

यदि अपने पैरो में कहीं काँटा लग जाता है तो उससे बड़ी भारी वेदना होती है फिर न मालूम अन्य जीवों पर चक्र-भाला-बरछा-तलवार-शक्ति-तीर गोली आदि अनेक प्रकार के शस्त्रों के प्रहार करने पर छिदते व मरते हुये उन जीवों को कितना दुख होता होगा ?

(२६)

सत्य१ बिन संसार में चलता नहीं कुछ काम है।
जिसमें नहीं है सत्यता वह सर्वथा बदनाम है॥
इसलिये यह तीर्थ हमको सत्यता२ का पाठ दे।
संसार के भव-सिन्धु को वह एक क्षण में पाट दे॥

(२७)

आचौर्यता का पाठ भी वह तो हमें बतला रहा।
'भूला३-गिरा-मत द्रव्य छू तं' यह महा पातक कहा॥

---

१ *स्थूलमलीकं न वदति न परान् वादयति सत्यमपि विपदे।*
यत्तद्वदन्तिसन्तः स्थूलमृषावाद वैरमणम् ॥ ५५ ॥

रत्नकरण्ड-श्रावकाचारो)

भावार्थ-जो स्थूल (मोटा) झूठ न तो आप बोले, और न दूसरों से बुलवावे तथा विपत्ति के लिये अर्थात् जिस वचन से किसी को आपत्ति आ जावे, उसके अर्थ यथार्थ भी न आप बोले न परसे बुलवावे उसको सत्पुरुष (गणधर देव) स्थूल झूठ वचन से विरक्त होंना सत्य व्रत कहते हैं।

(क) मैंने किसी हिन्दू को झूठ बोलते नहीं सुना-एरियन यूनानी

(ख) मेगास्थनीज-को बहुत दिनों तक पटने में रहने पर भी एक भी ऐसा आदमी न मिला, जो कभी झूठ बोला हो।

(ग) गांव के रहने वाले स्वभावतः पञ्चायतों में दृढ़ता से सत्य का साथ देते हैं। मेरे सामने, सैकड़ों ऐसे अभियोग हुये हैं, जिनमें मनुष्य को सम्पत्ति, स्वाधीनता और प्राण तक उसके झूठ बोलने पर अवलम्बित रहे हैं पर उसने झूठ बोलना स्वीकार नहीं किया। कर्नल स्लीमेन

३ *निहतं वा पतितं वा सुविस्मृतं वा परस्वमविसृष्टं।*
न हरति यन्नच दत्तेतदकृश चौर्य्यादुपारमणम् ॥५७॥

(रत्न करण्ड श्रावकाचार)

जल और मृतिका के सिवा पर वस्तु से ममता तजो।
आचौर्य वृत्ति हृदय धर, निर्लोभ[1] प्रभु को भजो॥

(२८)

व्यभिचारिता कितना भयंकर पाप इस संसार में।
इस पाप वश प्राणी हमेशा डूबता मँझधार में॥
हो विषय उन्मत्त जो पर-दार से आसक्त हो।
होता पतन उसका सतत संसार पथ से भ्रष्ट हो॥

(२९)

निज[2] नारि तज पर नारि से जो काम रोगी रति करे।
जूठन भरी उन पत्तलों पर स्वान ज्यों लड़-लड़ मरे॥
ठीक वृत्ती स्वान सम इस पापमय व्यभिचार में।
करते घृणा कह जारलुच्चा आज इस संसार में

भावार्थ-जो रक्खे हुए, तथा गिरे हुए अथवा भूले हुए, अथवा धरोहर रक्खे हुए, पर द्रव्य को नहीं हरता है और न दूसरों को देता है सो स्थूल चोरी से विरक्त होना आचौर्य व्रत है।

१ कुछ समय पहले भारतवासियों की कितनी निर्लोभमय सुन्दर प्रवृत्ति थी। एक समय सुलतान शाहरुख का एलची अब्दुलरज्जाक जो १४४३ ई० कालीकट में आया था। वह अपनी किताब "मुतालुलसादीन" में लिखते हैं कि:-

हर किस्म का माल बगैर मालिक के बाजार में खुला पड़ा रहता है, मगर कोई उसे हाथ नहीं लगाता है।

२ न तु परदारान् गच्छति न परान्गमयति च पाप भीतेर्यत्।
सा परदार निवृत्तिः स्वदार सन्तोष नामापि॥
(रत्नकरण्ड श्रावकाचार)

(३०)

इसको कुशील कहा जगत में सर्वथा यह त्याज्य है।
स्थान पा सकता नहीं जहँ तीर्थ का साम्राज्य है ॥
भूषण नहीं दूषण प्रबल यह नर्क-पथ का मूल है।
तीर्थ-भक्तों के लिये यह वज्रमय तिरशूल है ॥

(३१)

इसलिये इसको तजो व्यभिचार दुख का मूल है।
निज नारि से ही प्रेम उत्तम ज्यों कमल का फूल है ॥
पर-नारि नारी है नहीं नारी समझना भूल है।
इसलिये तजिये इसे यह सर्वथा प्रति-कूल है ॥

(३२)

जो परिग्रह[१]-रत रहे सुख-शांति उनको है नहीं।
कोट्याधिपति बन कर उन्हें फिर भी न शांति है कहीं ॥
यह अधम-वृत्ति जगत में अतिही भयङ्कर है महा ।
तीर्थ उसको पाप कहता अधिक तृष्णा है जहाँ ॥

भावार्थ-जो पाप भय से न तो पर स्त्री के प्रति गमन करे और न दूसरे को गमन करावे, यह पर-स्त्री त्याग तथा स्वदारसन्तोष व्रत है।

१ "चेतनावत्स्वचेतनेषु च बाह्याभ्यन्तरेषु द्रव्येषु मूर्च्छा परिग्रहः"

(तत्वार्थाधिगमसभाष्यं)

भावार्थ-चेतनयुक्त अथवा चेतन रहित जो बाह्य तथा आभ्यन्तर द्रव्य पदार्थ हैं उनके विषय में जो मूर्च्छा भाव होता है, उसे परिग्रह कहते हैं।

(३३)

यह पाप तृष्णा अति भयङ्कर ध्यान से समझो इसे।
सन्तोष जिनके है नहीं वह पाप कीचड़ में फँसे॥
रात-दिन अन्याय कर संचय करे धन-राशि को।
हो दीन-दुखियों से विमुख पूरण करे निज आश१ को॥

(३४)

ऐसी जिन्हों की वृत्ति है वे सोच लें इस बात को।
भोज राजा की कथा२ जो थी हुई उस रात को॥
औ सिकन्दर शाह३ भी साम्राज्य-सुख में मस्त थे।
उसकी दशा तब क्या हुई जब हो रहे वे ग्रस्त४ थे॥

(३५)

इसलिये यह लोभ तज सन्तोष-अमृत पीजिये।
यह तीर्थ "सर्वोदय" कहे इस पाप को तज दीजिये॥
इस तीर्थ के अति सुखद-अनुपम ये अनूठे रत्न है।
संसार के उद्धार के बस एक मात्र प्रयत्न हैं॥

---

१ *"प्रार्थना कामोभिलाषाकांक्षा गार्द्धयं मूर्च्छेत्यनर्थान्तरम्"*

इच्छा-प्रार्थना-काम-अभिलाषा-आकांक्षा-गृद्धि और मूर्च्छा ए एकार्थ वाची हैं। (तत्त्वार्थाधिगमसभाष्यं)

२ कहते हैं कि रात्रि के समय महाराजा भोज, अपनी सुन्दर रमणियों, स्नेही मित्रों, प्रेमी बन्धुओं, हार्दिक-अनुरागी-सेवकों, हाथी, घोड़े आदि की अपूर्व सर्वाङ्गीण आनन्द सामग्री के विषय में एक श्लोक बना रहे थे कि "चेतोहरा युवतयः सुहृदयाऽनुकूलाः, सद्बान्धवा प्रणय गर्भ गिरश्च भृत्याः। वल्गन्ति दन्ति निकराः तरला तुरङ्गाः",

(३)

प्राणियों की प्राण-रक्षा धर्म बिन होती नहीं ।
निरपेक्ष "ऊसर" भूमि में तृण ऊग सक्ता है कहीं ? ॥
जिस "राष्ट्र" ने इस धर्म का गर कर दिया प्रतिकार है ।
बिन धर्म उसको "राष्ट्र" कहना सर्वथा बेकार है ॥

(४)

विश्व-शांति, धर्म बिन होती नहीं संसार में ।
सद्भावना का मंत्र देता धर्म१ ही साकार में ॥
अन्याय पापाचार का साम्राज्य जहँ पर नित रहे ।
सत् धर्म वहँ पर है नहीं मिथ्या भला ठहरा रहे ॥

(५)

न्याय२ मूर्ति वे "नियोगी" क्या कहें पढ़ लीजिये ।
बिन धर्म-रक्षा है नहीं बस, धर्म धारण कीजिये ॥
सुख-शांति के साधन जगत में वास्तविक साधन नहीं ।
धर्म से बढ़ कर न कोई और साधन है नहीं ॥

---

१ *लार्ड एवरी ने ठीक कहा है—*

"Religion was intended to living peace on earth and goodwill towards men, whatever tends to hatred and persecution, however correct in the letter, must be utterly wrong in the Spirit."

अर्थात्—विश्व-शांति तथा मानवों के प्रति सद्भावना का कारण धर्म है, जो घृणा तथा अत्याचारों को उत्तेजित करता है, उसे शब्द से धर्म भले ही कहा जाय किन्तु भाव की दृष्टि से पूर्णतया मिथ्या है ।

२ न्याय मूर्ति श्री नियोगीजी महाशय ने धर्म-तत्त्व के समर्थन में

(६)

साम्यवादी—पथ—प्रणेता रूस जैसे देश का ।
देख कर "लेनिन"१ कहे इक कार्य उस दुर्वेश२ का ॥
धर्म मादक वस्तु है निरपेक्षता धारण करी ।
वास्तविक क्या धर्म है ? इसकी न उन कोशिस करी ॥

एक बहुत सुन्दर बात कही थी कि "यदि इस जगत में वास्तविक धर्म का नाश न रहे तो शांति के साधन रूप पुलिस आदि के होते हुए भी वास्तविक शांति की स्थापना नहीं की जा सकती है । जैसे पुलिस तथा सैनिक-बल के कारण साम्राज्य का संरक्षण घातक शक्तियों से किया जाता है, उसी प्रकार धर्मानुशासित अन्तः करण के द्वारा आत्मा उच्छृङ्खल तथा पाप-पूर्ण प्रवृत्तियों से बच कर जीवन तथा समाज के कार्यों में उद्यत होता है ।

१ साम्यवाद सिद्धान्त प्रतिष्ठापक रूस के भाग्य विधाता 'लेनिन' कहते हैं कि:—

"Religion to his master, Marx, had been the "Opium of the people" and to Lenin it was a kind of spiritual cocaine in which the slaves of capital drown their human perception and their demands for any life worthy of a human being."

Fulop Miller, Mind and Face of Bolshevism. P. 78.

अर्थात्-"उस धर्म के प्रभाव में आये हुए व्यक्ति धर्म को उस अफीम की गोली के समान मानता है, जिसे खाकर कोई अफीमची क्षणभर के लिये अपने में स्फूर्ति और शक्तिका अनुभव करता है, इस प्रकार की दृष्टि से धर्म भी कृत्रिम आनन्द अथवा विशिष्ट शान्ति प्रदान करता है ।

देखिये-फुलोप मिलर-माइंड एन्ड फेस आफ बोलशेविज्म पृ. क्र. ७८

२ "किसी आतताई को धर्म की ओट में अत्याचार करते देख उन

(७)

परिचय मिला नहीं धर्म१ का इन व्यक्तियों को भूल से ।
इसलिये वे बन गये हैं आज कुछ प्रतिकूल से ॥
उनको बताना है हमें सत्-धर्म का क्या लक्ष्य है ? ।
इसमें छुपी उत्तम प्रभा अब देख लो प्रत्यक्ष है ॥

(८)

सद्धर्म लक्षण तीर्थ ने कितना अनूठा है कहा ।
कल्याण प्राणी मात्र का जिसमें अनूपम भर रहा ॥
संसार दुख२ से प्राणियों को सर्वथा जो दूर कर ।
उत्तम सुखों को प्राप्त करता, सर्वथा होकर निडर ॥

अत्याचारों से व्यथित हो "लेनिन" कहता है कि "विश्व-कल्याण के लिये धर्म की कोई आवश्यकता नहीं है" ।

१ *धर्मो नीचैः पदादुच्चैः पदे धरति धार्मिकम् ।*
तत्राजवञ्जवो नीचैः पदमुच्चैस्तदत्ययः ॥ (*पञ्चाध्यायी*)

भावार्थ-जो धर्मात्मा पुरुष को नीच स्थान से उठा कर उच्च स्थान में धारण करे, उसे धर्म कहते हैं । संसार नीच स्थान है और उसका नाश होना "मोक्ष" उच्च स्थान है ।

२ *देशयामि समीचीनं धर्मं कर्मनिबर्हणम् ।*
संसार दुःखतः सत्वान् यो धरत्युत्तमे सुखे ॥

(रत्नकरण्डश्रावकाचार)

(६)

जिसमें उदय सर्वांङ्ग हो जो हो समृद्धी से भरा।
और मुक्ती प्राप्त हो बस वह धरम१ ही है खरा॥
मानव हृदय देवत्व से अभिव्यक्त हो वृष२ है वही।
हिंसा-विरक्ती न्याय-प्रियता सत्य प्रिय वृष३ है सही॥

---

१ *''यतोऽभ्युदयनिःश्रेय स सिद्धिः स धर्मः'' (वैशेपिक-दर्शन)*

जिसमें सर्वाङ्गीण उदय-समृद्धि तथा मुक्ति प्राप्त हो वही धर्म है।

× × × ×

२ *श्री विवेकानन्दजी कहते हैं कि:-*

''Religion is the Mani Festation of divinity in man''

''मनुष्य में विद्यमान देवत्व की अभिव्यक्ति को धर्म कहते हैं।

× × × ×

३ *भारत के उपराष्ट्रपति श्री राधाकृष्णन कहते हैं कि:-*

''Religion is the pursuit of truth and justice abdication of violence.''

''सत्य तथा न्याय की उपलब्धि को एवं हिंसा के परित्याग को धर्म मानते हैं।

\+ + + +

(१०)

आत्म की स्वाभाव-परणति की अवस्था धर्म है।
विकृत अवस्था को बताया एक मात्र अधर्म है॥
क्रोधादि परिणतिसे रहित निज आत्मरस१ में थिर रहे।
उसको कहा है धर्म सच्चा जहाँ सरस गंगा बहे॥

(११)

धर्म सुख२ कर है सदा निज कार्य जिससे सब सधे।
संसार की वे वेदनाएँ इक क्षणक में सब रुँधे॥
क्षणिक सुख के नष्ट-भय से जो विमुख होकर चले।
वह धर्म-पथ से दूर हो आपत्तियों में नित रुले॥

---

१ *वत्थुसुहावो धम्मो धम्मो जो सो समोत्तिणिद्दिट्ठो।*
मोहक्कोहविहीणो परिणामो अप्पणो धम्मो॥

(भगवन्-कुन्दकुन्द स्वामी)

भावार्थ-आत्मा की स्वाभाविक अवस्था का नाम धर्म है। इसे दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि स्वभाव प्रकृति (Nature) का नाम धर्म है, विभाव प्रकृति का नाम अधर्म है।

२ *धर्मं सुखस्यहेतुः हेतुर्न विराधकः स्वकार्यस्य।*
तस्मात् सुख भंगभिया मा भूःधर्मस्य विमुखस्त्वम् ॥२०॥

(आत्मानुशासन)

भावार्थ धर्म सुख का कारण है। कारण अपने कार्य का विनाशक नहीं होता। अतएव आनन्द के विनाश के भय से तुम्हें धर्म से विमुख नहीं होना चाहिये।

(१२)

विशुद्ध मनकी वृत्ति हो अरु ज्ञान सच्चा है जहाँ।
अरु सत्य होवे आचरण बस ! धर्म१–सच्चा है वहाँ॥
सम्पूर्ण–दुख से मुक्त हो सुख–शांतिमय धारा बहे।
इस धर्म को समझे बिना विपरीत "लेनिन" क्या कहे ?

(१३)

जिस आत्म में-जिस जाति में-जिस देशमें ये धर्म हो।
जिस राष्ट्र में उस धर्म से परिपूर्ण सत् शुभ कर्म हो॥
सुख–शांतिमय गंगा बहे आह्लाद प्राणी मात्र हों।
उस राष्ट्र के वे नागरिक तबही सरल सत्पात्र हों॥

(१४)

उस धर्म के परताप से उस देश में सुख शांति हो।
सम्पूर्ण प्राणीमात्र का आपत्तियों से अन्त हो॥
घी–दूध की नदियाँ बहें उस धर्म के परताप से।
"स्वर्ण–युग" का हो उदय तब फेर अपने आप से॥

---

१ धर्मः पुंसो विशुद्धिः सा च सुदृगवगम चारित्ररूपा ॥९०॥
(अनागारधर्मामृत प्रथमोऽध्यायः)

भावार्थ-आत्मा की विशुद्ध–मनोवृत्ति–सत्यश्रद्धा, सत्य ज्ञान तथा सत्याचरण रूप परणति धर्म है।

(१५)

पर-चक्र का भय नष्ट हो जहँ धर्म की अभिवृद्धि हो।
स्वातंत्र्यता-स्नेहता सुख-शांति आदि समृद्धि हो ॥
आधिभौतिक आधिदैविक शक्ति सब एकत्र हों।
वह व्यक्ति अथवा राष्ट्र तबही एक मात्र पवित्र हों ॥

(१६)

इस पुण्य भारत-भूमि पर वे धर्म-मूर्ति विहार कर।
उन्नति शिखर पर था चढ़ा संसार के इस क्षितिज पर ॥
देवगण[१]—गुण—गान करते धर्म—भूपित—भूमिका।
इस तीर्थ भारत—भूमि की है धर्म सच्ची चूलिका ॥

(१७)

निरपेक्ष[२] वादी आजके युग की दशा क्या हो रही ?
सुख-शान्ति और समृद्धि प्रति-दिन मूल-जड़ से खो रही ॥
प्रतिदिन समस्याएँ उलझती ही चली वे जा रहीं।
विन धर्म के इस लोक में सुख-शांति किञ्चित है नहीं

---

१ *गायन्ति देवाः किलगीतकानि, धन्यास्तु ये भारत भूमि भागे।*
स्वर्गापवर्गस्य च हेतु भूते, भवन्ति भूयः पुरुषा सुवस्वात् ॥
(विष्णुपुराण)

अर्थात् देवता भी ऐसे गीत गाया करते हैं कि वे पुरुष धन्य हैं जो कि स्वर्ग और अपवर्ग के हेतु-भूत भारत वर्ष में जन्म लेते हैं वे हम से भी श्रेष्ठ हैं।

२ *'अनपेक्षःशुचिर्दक्ष उदासीनोगतव्यथा'* (भ. गी. अ.१२ श्लो.१६)

(१८)

इतिहास१ यह करता प्रमाणित खोल करके देखलो।
उस चन्द्रगुप्त सुमौर्य्य के शासन-समय को देखलो॥
उसकी प्रजा थी धर्म-रत उन्नति-शिखर-आरूढ़ थी।
धन-धान्य से परिपूर्ण अरु सुख-शांति आदि समृद्ध२थी॥

(१९)

आज भी विज्ञान-युग में धर्म-पथ पर जो चले।
सुख-शांति और समृद्धि पावे और वे फूले-फले॥
भारत 'रिकार्ड' बता रहा उस फौजदारी न्याय में।
"सर्वोदयी" उन जैनियों का "शून्य" है अन्याय में॥

भावार्थ-जिसके किसी भी प्रकार की इच्छा-स्पृहा और कामना नहीं या जिसे किसी बात की परवा न हो उसे 'निरपेक्ष' कहते हैं।

१ सर्वोदयी सम्राट चन्द्रगुप्त ने यह पहले ही घोषित करदिया था कि "प्रजा की समृद्धि-शान्ति यह उद्योग पर निर्भर है"।

(देखो कौटिल्य अर्थ-शास्त्र पृष्ट २३६)

उसने इस घोषणा को सफल बनाने में कुछ उठा नहीं रखा था, जिसे देख विदेशी भी दंग रह गये थे, और वे भारत से ईर्षा करने लगे थे और उसकी प्रशंसा के गीत गाने लगे थे।

(देखो मैक क्रिन्डल एशियेन्ट इण्डिया)

विदेशियों ने सम्राट चन्द्रगुप्त के शासन-कालमें उनकी इस अहिंसा मयी नीति को देखा कि "जो राजा पढ़-लिख कर प्राणी मात्र के हित में तत्पर रहता है और प्रजा का शासन करता है वह चिरकाल तक पृथ्वी का उपभोग करता है। (कौटिल्य अर्थ शास्त्र पृष्ट ६)

२ एक यूनानी राजदूत ने जो चन्द्रगुप्त के दरबार में रहता था।

(२०)

धर्म-पथ१ से हो उपेक्षित आजके ये राष्ट्र सब।
निज स्वार्थ पोषण पर तुले उस धर्म पथ का मूल अब॥
सामर्थ्य---सत्तावान ही जीवित रहे संसार में।
दुर्बल हमेशा पिट रहे देखो सरे बाजार में॥

(२१)

संचय करो सामर्थ्य-सत्ता-छल-कपट की दौड़ में।
धर्म तज हामी बनो उन्नतिमयी घुड़ दौड़ में॥

आश्चर्य और प्रशंसा के साथ लिखा है, कि देश के अधिक भाग में सिंचाई का प्रबन्ध होने के कारण इस देश में अकाल पड़ता ही न था और बोई हुई भूमि के पास ही युद्ध और लड़ाईयां होती थी, परन्तु युद्ध करनेवालों में से कोई भी किसान व उसकी खेती को कुछ हानि नहीं पहुँचाता था। चन्द्रगुप्त के हिन्दू राज्य का बल और विस्तार, उसके राज्य में जान और माल की रक्षा और प्राचीन समय में खेती और सिंचाई के उत्तम प्रबन्ध की दशाओं का वर्णन ऐसा है जिसे आज कल का प्रत्येक भारतीय अभिमान के साथ स्मरण करेगा। (आर. सी. दत्त)

१ *धर्मएवहतोहन्ति धर्मोरक्षति रक्षितः।*
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मानो धर्मो हतोऽवधीत्॥
(मनुस्मृति अध्याय — श्लोक १५)

भावार्थ–विनाश किया हुआ ही धर्म मारता है, और रक्षा किया हुआ ही धर्म रक्षा करता है, इसलिये धर्म का विनाश न करें। 'जिससे कि वह विनष्ट हुआ धर्म हमें न मारदे–अर्थात् धर्म का त्याग करने वाले पुरुष का पतन हो जाता है, यही विनष्ट हुए धर्म से मनुष्य का मारा जाना है

'उन्नत' बना 'सिद्धान्त' अब उस व्याघ्र[१] के आकार में।
फँसते विपत्ती पङ्क में उस धर्म के प्रतिकार में ॥

(२२)

सर्व-भौतिकवाद[२] के विज्ञान में आकर्ष हो।
भूल बैठे धर्म के उन्नतिमयी उत्कर्ष को ॥
जिस बुद्धि-वैभव पर जिन्हें कुछ गर्व पहले था यहाँ।
आज लज्जित हो रहे उन्नत न मस्तक अब वहाँ ॥

(२३)

अणुशक्ति नामा वस्तु जो विज्ञान की इक देन है।
उससे किसी भी राष्ट्र को नहिं एक क्षण भी चैन है ॥

---

१ एक वृद्ध व्याघ्र अपने को बड़ा भारी अहिंसा व्रती बता कर प्रत्येक पथिक से कहता था कि "इदं सुवर्ण कङ्कणं गृह्यताम्" एक गरीब ब्राह्मण व्याघ्र के स्वरूप को भूल उसके चक्कर में अपने प्राणों से हाथ धो बैठा था। (पन्च तंत्र से)

२ सर्वभक्षी भौतिकवाद का अधिक विकाश होने के कारण पहले तो इनकी आँखे विज्ञान के चमत्कार के आगे चकाचोंध युक्त सी हो गई थी, किन्तु एक नहीं दो, महायुद्धों ने विज्ञान का मस्तक नीचा कर दिया, जिस बुद्धि-वैभव पर पहले गर्व किया जाता था, आज वह लज्जा का कारण बन गया। अणुबम नामकी वस्तु इस प्रगतिशील विज्ञान की अद्भुत देन है। जिसने अल्पकाल में जापानियों का स्वाहा कर दिया, लाखों बच्चे, स्त्री असमर्थ पशु-पक्षी जलचर अमेरिका की राजकीय महत्वाकांक्षा की पुष्टि की लालसाके निमित्त क्षण भर में अपना जीवन खो बैठे। यह कितना अँधेर है। (जैन शासन)

ऐसे-दुखद विज्ञान से सुख-शांति मिल सकती नहीं।
उस धर्ममय "विज्ञान"१ में दुख-ताप-क्रन्दन है नहीं॥

(२४)

बिन धर्म प्राणी मात्र को सुख शांति मिलती है नहीं।
धर्म की निरपेक्षता नहिं भूल तुम करना कहीं॥
धर्म, राजा-प्रजा का बस एक मात्र अधार है।
धर्म से संसार का होता सहज उद्धार है॥

(२५)

धर्म से आपत्ति-संकट सहज में सब दूर हों।
धर्म से इस देश में तृण-अन्न सब भरपूर२ हों॥
धर्म से परचक्र का भय एक क्षण में नष्ट हो।
धर्म से सत्पथ मिले जो हो रहा पथ-भ्रष्ट हो॥

---

१ परा यथा तदक्षरमधिगम्यते। (मुण्डकोपनिषद)

अर्थात्—परा वह विद्या है जिससे अविनाशी ब्रह्म जाना जाता है।

२ अलाउद्दीन खिलजी का हाल लिखते हुए राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द कहते हैं कि:—

"तवारीख फिरस्ता में लिखा है कि उस वक्त दिल्ली में अबके हिसाब से एक रुपये का दो मन गेहूँ बिकता था, और पौने चार मन जव, (जो) साढ़े सात सेर मिसरी थी और तीस सेर का घी"

(इतिहास तिमिरनाशक पहला खण्ड पृष्ठ २६)

(२६)

धर्म से मानव-हृदय में दया-करुणा अवतरै ।
सम्राट[1] नाम "अशोक" अपने वंशजों से उच्चरै ॥
"धर्म की ही विजय को सच्ची विजय समझो सही"
धर्म बिन जो हो विजय उसको विजय समझो नहीं

---

[1] सम्राट अशोक ने अपनी कलिङ्ग विजय में जब लाख से ऊपर मनुष्यों की मृत्यु का भीषण दृश्य देखा तो उस चण्डकोशी की आत्मा में अनुकम्पा का उदय हुआ। उस दिन से उसने संसार भरमें, अहिंसा-प्रेम सेवा आदि का उज्जवल भाव उत्पन्न करने में अपना और अपने विशाल साम्राज्य की शक्ति का उपयोग किया, तथा अपने वंशजों के लिये यह स्वर्ण शिक्षा दी कि "वे यह न विचार करें कि तलवार से विजय करना विजय कहलाने के योग्य है, वे उसमें नाश और कठोरता के अतिरिक्त और कुछ न देखें। वे धर्म की विजय को छोड कर और किसी प्रकार की विजय को सच्ची विजय न समझें। ऐसी विजय का फल इहलोक तथा परलोक में होता है" (देखो अशोक शिला लेख नम्बर १३)

अशोक ने "जीव-रक्षा के सम्बन्ध बड़े बड़े नियम बनाये थे, यदि किसी भी जाति या वर्ण का कोई भी मनुष्य इन नियमों को तोड़ता तो उसे बड़ा कड़ा दण्ड दिया जाता था, सम्पूर्ण साम्राज्य में इनका प्रचार था, इन नियमों के अनुसार कई प्रकार से प्राणियों का वध बिलकुल ही बन्द कर दिया गया था। साल में ५६ दिन तो पशु-वध बिल्कुल ही मना था। अशोक के पञ्चम स्तंभ-लेख में यह सब नियम स्पष्ट रूप दे दिये गये हैं। (देखो अशोक के धर्म-लेख पृष्ट ५१)

चतुर्थ सर्ग

सर्वोदय में अहिंसा की सार्वभौमिकता

---

(१)

इस तीर्थ के सुन्दर भवन की ही अहिंसा नींव[१] है।
इसके बिना मानव-हृदय भी सर्वथा निर्जीव है॥
साधना का पुण्य यदि है तो अहिंसा मर्म है।
पुण्य-जीवन में सरस रस ही अहिंसा धर्म है।

---

१ सर्वोदय के आद्य प्रतिष्ठापक भगवान महावीर ने अहिंसा तत्व की प्रधानता के लिये यह स्पष्ट कहा है।

सव्वे पाणा पिया उया, सुहसाया दुह पडिकूला अप्पिय,
वहा पियजीवणो, जीवि उकामा, तम्हा रणतिवाएज्ज किंचणं।

अर्थात्- सब प्राणियों को आयु प्रिय है, सब सुख के अभिलाषी हैं, दुख सबके प्रतिकूल है, वध सबको अप्रिय है, सब जीने की इच्छा रखते हैं इससे किसी को मारना या कष्ट पहुँचाना उचित नहीं है।

(भन्डारी कृत "भगवान महावीर" पृ. २६८)

समीचीन सर्वोदय काव्य

सिद्धान्त परंगत आचार्य शान्ति सागरजी महाराज

के अन्यतम वीतराग शिष्य

१०८ महर्षि वीरसागरजी महाराज

(२)

इसकी प्रभा की प्रखर-ज्योती विश्व को आलोकती।
इसकी विमल प्रतिभा-प्रभा विश्वको प्रतिबोधती॥
सबसे अधिक आदर्श ऊँचा इस अहिंसा तत्व का।
सिद्धान्त इसके हैं गहन, रक्षक अखिल भुवि सत्व का॥

(३)

इस अहिंसा तत्व को तीर्थेश भी अपना रहे।
ऋषि-मुनि-तपस्वी भी इसी का ध्यान प्रतिदिन धर रहे॥
पाश्चात्य देशों पर अहिंसा का बड़ा उपकार है।
श्री "जार्ज बनडाशा"[१] कहे क्या देखिये अखबार है॥

(४)

"सी. एफ. एण्ड्रूज"[२] ने बताया राष्ट-पथ-दर्शक यही।
इस तत्व के अध्ययन से मिलते सरल साधन सचसही॥
जब राष्ट्र-पथ में हो व्यथित "गाँधी" पकड़ते थे इसे।
मिलती सफलता तब उन्हें आपत्ति-संकट सब नशे॥

---

१ विश्व के अप्रितम विद्वान "जार्ज बनार्डशा" जैन तत्वज्ञान पर अत्यन्त अनुरक्त प्रतीत होते हैं। जैन अहिंसा के आदेशों को शिरोधार्य कर "शा" महाशय निरामिष भोजी जीवन व्यतीत करते हैं। कुछ समय पूर्व उनने देवदास गांधी से कहा कि "जैन धर्म के सिद्धान्त मुझे अत्यन्त प्रिय हैं मेरी आकांक्षा है कि मृत्यु के पश्चात मैं जैन परिवार में जन्म धारण करूँ"।

२ "सी. एफ. एन्ड्रूज" महाशय ने एक बार बताया था कि जब राष्ट्र के प्रदर्शन में बापू का मार्ग-तिमिर-तिरोहित बन जाता था और वे आत्म प्रकाश के लिये लम्बे लम्बे उपवासों का आश्रय लेते थे, उस समय

(५)

फ्राँस के विद्वान "रोम्या-रोल"१ भी बतला रहे।
इस अहिंसा तत्व पर वे क्या अनूठा कह रहे ॥
जिस सन्त ने उत्तम अहिंसा खोज कर प्रचलित करी।
क्रूर हिंसा-मध्य यह लाकर अहिंसा जिन धरी ॥

(६)

वे थे अधिक विद्वान "न्यूटन" से महा गम्भीर थे।
"विलिङ्गडन" से भी अधिक वे शक्तिशाली वीर थे ॥
यह अहिंसा प्राणियों का प्राण है अरु धर्म है।
हिंसा भयङ्कर श्राप है बिन मौत का यह मर्ण है ॥

वे प्रायः जैन शास्त्रों के सम्यक अनुशीलन में निरत देखे जाते थे, जिसके प्रसाद से वे अपनी अहिंसात्मक साधना के क्षेत्र में सफलता पूर्वक उत्तीर्ण होते थे।

१ 'फ्राँस' के विश्व-विख्यात विद्वान "रोम्या रोलाँ" इस अहिंसा के विषय में बहुत उपयोगी तथा प्रबोधप्रद बात कहते हैं। कि:-

"The Rishis who discovered the law of 'Non-violence' in the midst of violence were greater geniuses than Newton, greater warriors than Wellington. Nonviolence is the law of our species as violence is the leaw of the brute."

अर्थात्-जिन सन्तों ने हिंसा के मध्य अहिंसा सिद्धान्त की खोजकी वे न्यूटन से अधिक बुद्धिमान थे, तथा विलिङ्गटन से बड़े योद्धा थे।

(७)

"वेणी-प्रसाद"१ बता रहे हैं इस अहिंसा धर्म पर।
है गहन सिद्धान्त इसका इस जगत की भूमि पर॥
मानव-हृदय में कल्पना जो उच्च अरु आदर्श की।
बिन अहिंसा के उदय होती न मर्म-स्पर्श की॥

(८)

जो मनुज इस जन्मका यदि सत्य विश्लेषण करे।
परिणाम इसका यह मिले वह चित्त अहिंसा में धरे॥
अन्तः करण में ज्योति प्रकटे उस अहिंसा धर्म की।
तत्व बुद्धि प्रकट हो-हो नष्ट बुद्धि भर्म की॥

---

१ धुरन्धर विद्वान डाक्टर "वेणीप्रसादजी" ने लिखा है कि सबसे ऊँचा आदर्श जिसकी कल्पना, मानव मस्तिष्क कर सकता है अहिंसा है। अहिसा के सिद्धान्त का जितना भी व्यवहार किया जाय उतनी ही मात्रा सुख और शांति की विश्व-मण्डल में होगी। उनका यह भी कथन है कि "यदि मनुष्य अपने जीवन का विश्लेषण करे तो इस परिणाम पर पहुँचेगा कि सुख और शान्ति के लिये आन्तरिक सामञ्जस्य की आवश्यकता है।"

(हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता पृष्ट ६१२ पर से)

"संसार, दया से जितना वश में होता है उतना दूसरी किसी भी चीज से नहीं होता। दया और परोपकार ये सुख और दीर्घायु के कारण हैं"।

(आईने अकबरी खण्ड ३ पृ. ३८३)

(६)

"तान, युन शाँ"१ चीन के भी तो गहन उद्गार हैं।
मानवोचित उच्च स्तर में अहिंसा सार है ॥
सर्वोच्च स्तर पर मनुज की चरम सीमा आयगी।
तब अहिंसा व्रत उन्हें मजबूर हो कर वायगी॥

---

१ चीनी विद्वान "डाक्टर तान युन शाँ" (डायरेक्टर चीनी भवन विश्व भारती एवं भारत स्थित चीनी सरकार) के सांस्कृतिक प्रतिनिधि के महत्वपूर्ण उद्गार विशेष मनन करने योग्य हैं:—"Ahimsa is the chief characteristic of common Indian and chinese culture. Chinese prefer to use the positive form rather than the negative, while Indians prefer to use the negative one.' Gandhijee said "All life in flesh exists by some violence; hence the highest religion has been defined by a negative word "Ahimsa"...........The gospel of Ahimsa was first deeply and systdmatically expounded and properly and specially preached by the Jain Tirthankaras, more prominently by the 24th Tirthankara, the last one Mahavira Vardhamana. Then again by Lord Buddha......"

Vide Amrit Bazar Patrika. P. 7. & 8. 31-10-4:.

अर्थात्-"अहिंसा भारतीय एवं चीनी संस्कृति का सामान्य तथा प्रमुख अंग है। भारत में निषेधात्मक अहिंसा की व्याख्या प्रचलित है और चीन में विधि रूप "गांधीजी ने भारतीय दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए

(१०)

सम्राट "अकबर"१ ने कहा कि बात यह अच्छी नहीं।
इन्सान का वह उदर भी क्या "कब्र" बन सकती कहीं॥
इसलिये पर जीव का वध कर करो अन्याय क्यों?
इस अहिंसा तत्व को सम्राट ने समझा कि यों॥

(११)

"बालगंगाधर" तिलक के वाक्य यह बतला रहे।
है अहिंसा धर्म उत्तम जीव सुख-शांती लहे॥
इसके हृदय में दया, करुणा-सरस वाङ्मय भर रही।
इसलिये यह धर्म-भूपर आज तक जीवित रही॥

कहा था" कि "इस देह में जीवन धारण करने में कुछ न कुछ हिंसा होती है, अतः श्रेष्ठ धर्म की परिभाषा में हिंसा न करना रूप निषेधात्मक अहिंसा की व्याख्या की गई है"। यह अहिंसा का उपदेश सबसे पहले विशेष तया जैन तीर्थङ्करों ने गम्भीरता एवं सुव्यवस्था पूर्वक बताया और उचित रूप से प्रचलित किया। उनमें २४ वें तीर्थङ्कर महावीर वर्द्धमान मुख्य थे। पुनः इस अहिंसा का प्रचार बुद्धदेव ने किया"।

१ यवन सम्राट अकबर ने अपने जीवन पर प्रकाश डालते हुए यह भी कहा था कि:—

"From my earliest years whenever I ordered animal food to be cooked for me, I found it rather tasteless and cared little for it. I took this feeling to indicate a necessity for protecting animals and

(१२)

जैन ऋषियों के लिये तो यह हृदय का हार है।
जिसके हृदय में यह नहीं वह धर्म ही बेकार है॥
इस अहिंसा-धर्म बिन चलता नहीं कुछ काम है।
क्रूर-परणति-हिंस्य वृत्ती सब जगह बदनाम है॥

(१३)

हिंसामयी इन वृत्तियों को यह अहिंसा दूर कर।
शांति स्थापित करे अरु सत्य धर्म प्रचार कर॥
इसकी प्रभा तिहुँ लोक में छाई अनादी काल से।
वह मलिन होती नहीं हिंसामयी कुछ चाल से॥

I refrained from animals food." (Ain-i-Akabari)
Quoted in English Jain Gazette. P. 32, Vol. XV11

"मांस-भक्षण प्रारम्भ से ही मुझे अच्छा नहीं लगता था, इससे मैंने उसे प्राणी-रक्षा का संकेत समझा और मैंने मांसाहार छोड़ दिया। तथा अहिंसा भाव से प्रभावित हुआ तब अब्दुलफजल के शब्दों में सम्राट अकबर की श्रद्धा इस प्रकार हो गई कि:-

"It is not right that a man should make his stomach the grave of animals."

(Ain-i-Akabari Vol. 3, BK V, P. 380)

यह उचित बात नहीं कि इन्सान अपने पेट को जानवरों की कब्र बनावें।

(१४)

संसार के सम्पूर्ण धर्मों का अहिंसा[1] मूल है ।
संसार के सब प्राणियों को ज्यों कमल का फूल है ॥
हिंस्यकारी वृत्ति को यह वज्र-मय तिरशूल है ।
सर्वाङ्ग सुन्दर यह अहिंसा धर्म के अनुकूल है ॥

(१५)

इस अहिंसा तत्व का सिद्धान्त अति गम्भीर है ।
संसार के सब प्राणियों की मेटता भव-पीर है ॥
है गहन इतिहास इसका "सार्व-भौमिक" है महा ।
लेखनी क्या लिख सकेगी ? शांति उसमें है कहाँ ??

---

१ धम्मदयास्वरूपेण त्रैलोक्ये च प्रख्यापिता ।
सर्वा तथा गतानाञ्च जननी इति ख्यापिता ॥

(महात्मा गौतम)

भावार्थ-तीन लोक में दया को ही धर्म कहा गया है और वही तथा-गतों (बुद्धों) की जननी मानी गई है ।

२ **इस्लाम धर्म** ।

"जो कोई अन्य प्राणियों के साथ दया का व्यवहार करता है अल्लाह उस पर दया करता है"......"मूक पशुओं की खातिर अल्लाह से डरो । निःसन्देह जो उन मूक पशुओं के प्रति नेकी का व्यवहार करता है और उन्हें पीने के लिये पानी देता है, वह अवश्य ही अल्लाह की तरफ से नाम पावेगा......" "इस भूमण्डल पर कोई भी पशु पक्षी ऐसा नहीं है

(१६)

हे अहिंसे ! परम–पावन !! तू महा सुखकारिणी !!!
संसार के सब प्राणियों को तू भवोदधि तारिणी ॥
तेरे हृदय में दया–करुणा का सरस–रस भर रहा।
संसार तेरे चरण में "छोटे" सहज ही झुक रहा ॥

॥ इति ॥

जो कि तुम्हारे समान ही अपने प्राणों से प्यार न करता हो"......

(देखो कुरान शरीफ आयत ६–१८)

× × × ×

"जो दूसरों के प्राणों की रक्षा करता है वह गोया तमाम मनुष्य-समाज के प्राणों की रक्षा करता है"।

(कुरान शरीफ आयत ५)

× × × ×

ईसाई धर्म

"तुझे हत्या नहीं करना चाहिये"। (देखो दस आज्ञायें)

\+ \+ \+ \+

निःसन्देह वह पुण्यात्मा है जो पृथ्वी से उपजे हुए फलों को खाता है। ('सेन्टल्यूक')

❀ ❀ ❀ ❀

एसिसी के सन्त फ्रांसिस कहते हैं कि:—

"ईश्वर चाहता है कि हमें अपने दीन भाईयों, पशुओं की हत्या नहीं करना चाहिये, बल्कि उनकी सहायता करना चाहिये, जब भी उनको सहायता की जरूरत पड़े।"

पारसी धर्म

"इन दुष्ट नर और नारियों की आत्माओंने-जिन्होंने जल में जलचरों को मारा और अहरमजदा (ईश्वर) के अन्य प्राणियों की मार काट की है, गन्दगी खाई है, उन्हें बुरा फल मिलेगा"।

(आर्द विरफ २०१)

❀ ❀ ❀ ❀

"जो दुष्ट मनुष्य पशुओं-भेड़ों और अन्य चौपायों की अनीति पूर्वक हत्या करता है उसके अंगोपाङ्ग तोड़कर छिन्न भिन्न किये जावेंगे"।

(आर्दविरफ २७४-२६२)

❀ ❀ ❀ ❀

सिक्ख धर्म

जो कोई मांस मछली खाता है और मादक पदार्थ का सेवन करता है उसके तमाम पुण्य नष्ट हो जाते हैं। (गुरु नानक)

+ + + +

बौद्ध धर्म

"जैसे माता अपने इकलौते बच्चे की निगरानी करती रहती है, जब तक वह जीता है, उसी प्रकार हमें छोटे और बड़े सभी जन्तुओं के लिये अपने हृदय और मनमें उदारता पैदा करना चाहिये। हमें समस्त जगत के सभी जीवों के प्राणों का मूल्य जान कर उनके प्रति दूर और नजदीक घृणा और द्वेष से रहित होकर प्रेम का व्यवहार करना चाहिये।

(सुत्त निपात)

+ + + +

जैन धर्म

"किसी के प्राणों को पीड़ा देना अच्छा नहीं, बल्कि दूसरों के प्राणों की रक्षा के लिये इतना ही सावधान होना चाहिये जितना कि अपने प्राणों के लिये, क्योंकि अहिंसा सबसे बड़ा धर्म है"।

(भगवान महावीर)

पंचम सर्ग

अर्वाचीन सर्वोदय में विषमता

---

(१)

जिसने लिखा इस तीर्थ का गौरव सुखद प्राचीन का।
वह लेखनी लिखने चली अब पतन अर्वाचीन १ का ॥
प्राचीन की वह प्राच्य पद्धति नाम मात्र हि शेष२ है।
सापेक्ष के स्थान पर निरपेक्ष नाम विशेष है ॥

(२)

प्राचीन युग जनतंत्र में थी धर्म की सापेक्षता ३।
आजका जनतंत्र क्यों बतला रहा निरपेक्षता ??
धर्म क्या परतंत्र बन्धन में जकड़ता है हमें ?
बिन धर्म–बन्धन मुक्त होना है कठिन इस जगत में ॥

---

१ आजकल २ बाकी ३ अहिंसा।

३ राजा उस गांव को दण्ड दे, जिसमें रहने वाले लोग अपने धर्म का पालन नहीं करते, ब्राह्मण लोग वेदों को नहीं जानते और भिक्षा मांग कर रहते हैं। क्योंकि ऐसा गांव लुटेरों का पोषण करता है। (वशिष्ठ)

(३)

आज से कुछ वर्ष पहले देश यह परतंत्र था ।
स्वातंत्र्य अरु परतंत्रता का जब यहाँ संघर्ष था ॥
उस भयानक युद्ध में इस धर्म ने रक्षा करी ।
धर्म की प्राची १ दिशा से तब अहिंसा अवतरी ॥

(४)

उस अहिंसा की शरण उस कर्मयोगी२ ने गही ३ ।
पर-नारि आमिष ४ त्याग की सद्वृत्ति उनकी कुछ रही ॥
उस अहिंसा ने बताया मार्ग बन्धन-मुक्ति का ।
शासन हिला सच धर्म से निरपेक्ष उस पाश्चात्य ५ का ॥

(५)

पाकर अहिंसा-शस्त्र को "गाँधी" समुन्नत बन गये ।
परतंत्र भारत-राष्ट्र को बन्धन-रहित वे कर गये ॥
थी अहिंसा प्रिय उन्हें उससे अधिक अति प्यार था ।
इस राष्ट्र के पथ का प्रदर्शक धर्म ही आधार था ॥

---

१ पूर्व २ महात्मा गांधीजी ।

३ हमारे राष्ट्र पिता गांधीजी ने "सत्य" और अहिंसा का राजनीति में अद्भुत प्रयोग हमारी आंखों के सामने कर दिखाया है उसकी पूर्ण प्रतिष्ठा अपने महान जीवन में करते हुए जो महापुरुष सतत और निरन्तर हमें सत्य और अहिंसा का पालन करते रहते हैं वे हमारे लिये वन्दनीय हैं । ब्रजलालजी वियाणी (अर्थ-मन्त्री-मध्यप्रदेश) जै. ग. ही. ज. अंक पृ. १७०

४ मांस ५ ब्रिटेन ।

(६)

इस अहिंसा का उन्हें विश्वास था, अभिमान था।
साधन सफलता का उन्हीं को एक मात्र प्रमाण था॥
इसलिये स्पष्ट कहते थे अहिंसा धर्म पर।
"कल्याण" १ नामक पत्र को पढ़लो जरा तो खोल कर॥

(७)

राष्ट्रपति राजेन्द्रबाबू भी इन्हीं के अङ्ग हैं।
पण्डित जवाहरलालजी भी एक मात्र अभंग हैं॥
ये भी अहिंसा धर्म को सर्वोच्च उत्तम मानते।
कर्मयोगी की गती को अच्छी तरह पहिचानते॥

(८)

इसलिये ये भी उन्हीं के पथ-प्रदर्शक हैं सही।
ये भी अहिंसा धर्म को सापेक्ष क्या मानें नहीं ??
धर्म की सापेक्षता इस तीर्थ का वस सार है।
बिन धर्म "सर्वोदय" जगत में सर्वथा बेकार है॥

(९)

जिस तीर्थ में नहिं धर्म हो वह तीर्थ कहलाता नहीं।
धर्म बिन उस 'तीर्थ' में कोई कभी जावे नहीं॥

---

१ मेरा अहिंसा धर्म मुझे शिक्षा देता है कि औरों की रक्षा के लिये अपनी जान देदो। दूसरों के मारने के लिये हाथ तक मत उठाओ। पर मेरी अहिंसा मुझे कायरता नहीं सिखलाती है।.........

(कल्याण अङ्क ५ वर्ष २६ पृ. १०१७)

तीर्थ में ही धर्म है अरु तीर्थ धर्म-स्थान है।
धर्म से उस तीर्थ का होता सहज उत्थान है॥

(१०)

आज के इस तीर्थ का निरपेक्ष यदि उद्देश्य है।
तब तीर्थ केवल तीर्थ है अरु नाम मात्र हि शेष है॥
नाम "सर्वोदय" कहाता काम जिसका अस्त है।
इसलिये यह नाम केवल सर्वथा अप्रशस्त है॥

(११)

सापेक्ष यदि उद्देश्य है तो तीर्थ-व्रत १ पालन करो
"सर्वोदयी" इस तीर्थ के उद्देश्य की रक्षा करो॥
उद्देश्य जिसका धर्म है उसका अहिंसा नाम है।
हिंसा अगर होवे वहाँ तो तीर्थ वह बदनाम है॥

(१२)

नाम "सर्वोदय" अनूठा सर्व प्राणी मात्र का।
हो उदय सीमा रहित जल-जन्तु प्राणी मात्र का॥
संकीर्णता जिसमें नहीं, वह तीर्थ "सर्वोदय" कहा।
पर आज का यह तीर्थ सीमित क्षेत्र में ही बन रहा॥

(१३)

मानवों की प्राण-रक्षा मात्र यह बतला रहा।
शेष जीवों के लिये अब क्षेत्र इसमें नहिं रहा॥

---

१ अहिंसा।

सब "जीव-मात्री" क्षेत्र था अब मात्र 'मानव' के लिये।
आज के इस तीर्थ ने उद्देश्य अब छोटे किये ॥

(१४)

मानवों की प्राण-रक्षा आज के संसार में।
धर्म केवल यह रहा इस तीर्थ के उद्धार में ॥
अधिकार मानव का रहा पूरा धरम की आड़ में।
शेष पशु-पक्षी भले ही जाय वे सब भाड़ में ॥

(१५)

उनके लिये इस धर्म में कोई न रक्षा-द्वार है।
जीवित रहे केवल मनुज बस यह उन्हें अधिकार है ॥
इसलिये प्रति दिन असंख्यों प्राणियों के प्राण हर।
योजनाएँ शत बनाई जा रहीं इस भूमि पर ॥

(१६)

कहीं 'मत्स्य'१ कहीं 'बन्दर' मरे कहीं 'भेड़-बकरी' कट रहीं।
"गाय" की उन गर्दनों२ पर भी मशीनें चल रहीं ॥

---

१ मछली

२ प्रसिद्ध है—नरहरि कवि के निम्न लिखित पद्य को सुन कर मुगल सम्राट अकबर ने गो कशी बिल्कुल बन्द करादी थी।

तृण जो दन्त तर धरहि तिनहि न मारत सरल कोइ।
हम नित प्रति तृण चरहिं बैन उच्चरहिं दीन होइ ॥
हिन्दुहिं मधुर न देहिं कटुक तुरकहिं न पिवावहिं।

संख्या नहीं उन "मुर्गियों" की मौत बिन वे मर रहीं।
आज "सर्वोदय" जगत में योजना१ ये बन रहीं ॥

(१७)

आज के इस देश का उन्नतिमयी व्यापार यह।
मानवों की प्राण-रक्षा का सरल साधन सु कह॥
फिरभी अहिंसा धर्म के हामीर२ बने "सर्वोदयी"।
आग पानी में लगी आश्चर्य हमको है यही ॥

(१८)

अब अहिंसा शब्द केवल नाम मात्र जु शेष है।
इस तीर्थ के इस क्षेत्र में हिंसा हुई जु प्रवेश है॥

पय विशुद्ध अतस्रवहि वच्छ महिथम्भन जावहि ॥
सुन शाह अकब्बर ! अरज यह कहत गऊ करजोरे करन ।
सो कौन चूक मोहि मारियत मुए चाम सेवत चरण ॥

१ यद्यपि अनेक प्रकार के खाद्य-पदार्थ मिलते हैं तथापि मनुष्य जीवित प्राणियों को दुख देने, मारने और भक्षण करने की ओर प्रवृत्त रहते हैं।

इस का कारण उनकी अज्ञानता तथा निर्दयता है। कोई भी आदमी निर्दयता को रोकने में, जो आन्तरिक सौन्दर्य है उसे नहीं देखता। प्रायः लोग अपने शरीर को पशुओं की कब्र बनाया करते हैं।

(देखो आईने अकबरी प्रथम खण्ड पृ. ६१)

२ पक्षपाती

जिस तीर्थ के उद्देश्य में यह धर्म प्रमुख प्रधान था।
सम्पूर्ण प्राणी मात्र के हितसाध्यरूप[1] विधान था ॥

(१६)

सीमित हुआ अब क्षेत्र इसका विषमता अब आ गई।
इसलिये इस तीर्थ पर काली घटा अब छा गई ॥
स्वार्थ वश परमार्थ भूले धर्म–पथ ठुकरा दिया।
काल्पनिक कुछ कल्पना को ही धरम बतला दिया ॥

---

१ सम्राट चन्द्रगुप्त के शासनकाल को ही ले लीजिये, वास्तव में चन्द्रगुप्त ने अपने शासन-काल में प्राणी मात्र का हित करने का उद्योग किया था। उन्होंने जो नियम बनाये थे वह कम से कम हिंसा होने देने की साक्षी देते थे। (देखो कौटिल्य अर्थ शास्त्र अधिकरण २ प्रकरण ४२–४३ व ४६ और अधिकरण ८ पृ. १२६)

यही नहीं बल्कि सम्राट चन्द्रगुप्त ने आज्ञा निकाली थी कि जो पशुओं को स्वयं मारे या मरवावे अथवा स्वयं चुरावे या चुरवावे उसको मृत्यु-दण्ड दिया जाय।

(देखो कौटिल्य अर्थ शास्त्र (लाहौर) पृष्ठ ११६)

उन्होंने पशुओं की ही नहीं बल्कि वृक्षों की रक्षा का भी प्रबन्ध किया है। (कौटिल्य अर्थ शास्त्र पृ. २१५)

उस दयालु सम्राट चन्द्रगुप्त के शासन काल में एक बार भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा, उसकी दयालु हृदयता ने ही सम्राट को राजपाट छोड़ कर जंगल में जाने को बाध्य किया। बड़ा गहन दुर्भिक्ष था, तपोधन साधुओं को भोजन मिलना भी कठिन था मगर सम्राट से जीवों का यह कष्ट न देखा गया। जितना हो सका रक्षा का प्रबन्ध उन्होंने कराया। उन्होंने पहले ही

(२०)

जीव-वध करना हमें यह धर्म सिखलाता१ नहीं ।
विन धर्म के संसार में कुछ काम ही चलता नहीं ॥
आज के जनतंत्र में भी राज-नीति धर्म है ।
विन धर्म के वह नीति भी तो पापपूर्ण अधर्म है ॥

(२१)

विश्व-कवि वे "रवीन्द्र"२ बाबू क्या अनूठा कह रहे ।
इस धर्म के सम्बन्ध में पढ़िये उसे क्या लिख रहे ??

से ऐसे नियम बना रखे थे जिनमें हिंसा न हो । इत्यादि
(देखो कौटिल्य अर्थशास्त्र अधिकरण ४ पृ. ७८ पृ. २१२)

१ *सर्वे तनुभृतस्तुल्या यदि बुद्ध्याविचार्यते ।*
इदं निश्चत्य केनापि न हिंस्य कोऽपि कुत्रचित् ॥
(शिवपुराण)

भावार्थ यदि बुद्धि से विचार किया जाय तो समस्त प्राणी मात्र बराबर हैं । इसी प्रकार निश्चय करके कभी भी और कहीं भी किसी के द्वारा कोई प्राणी मारने योग्य नहीं है ।

२ जिसकी अद्भुत अहिंसा केवल मनुष्य-घात को ही हिंसा घोषित करती है और जो पशुओं के प्राण-हरण को दोपास्पद नहीं मानती है, उनकी दृष्टि को उन्मीलित करते हुए विश्व-कवि रवीन्द्रबाबू कहते हैं कि हमारे देश में जो धर्म का आदर्श है वह एक हृदय की चीज (दया) है, वह बाहरी घेरे में रहने की नहीं है । हम यदि जीवन के महत्व को एक

इस हमारे "देश" में जो "धर्म" का आदर्श है।
वह है हृदय की "चीज"१ जो करती हमें स्पर्श है॥

(२२)

बाह्य के आडम्बरों से दूर रहना चाहिये ।
जीवन-"महत्ता" क्षेत्र को "संकीर्ण" अब न बनाइये॥
पशु-कीट और पतंग-पक्षी के नियम सब एक हैं।
"धर्म" के स्थान में मानव-पशु सब एक हैं॥

धार स्वीकार करते हैं तो फिर पशु-पक्षी-कीट-पतंग आदि किसी पर इसकी हद नहीं बांध लेते हैं। हम लोगों के धर्म की रचना स्वार्थ के स्थान में स्वाभाविक नियम ने ले ली है, धर्म के नियमों ने ही स्वार्थ को रखने की चेष्टा की है। (जैन शासन)

" The lack of mercy is to man the cause of the greatest disturbance, as it corrupts the action of their minds and words and bodies........mercy indeed engenders virtues, as a fractifying rain makes the crop grow."

The JATAK-MALA (S. B. B. I.) P. 243

"दया का अभाव मनुष्यों को सबसे सब बड़ी असुविधा है क्योंकि उसका अभाव उनके मन, वचन, और काय सम्बन्धी कार्यों को ठीक ठीक नहीं होने देता। दया से ही सद्गुणों का जन्म होता है जैसे समय की वर्षा से कृषि पलती है"। (जातक माला)

(२३)

इस अहिंसा[1] की प्रथा जल-जन्तु कीट पतंग पर।
एक सम पड़ती सभी पर भेद भाव निवार कर॥
उसके हृदय में जीव-जन्तू अरु मनुज सब एक हैं।
इस अहिंसा के पुजारी जीव मात्र अनेक हैं॥

(२४)

क्या मनुज ने धर्म का "ठेका" रिजर्व करा लिया?
या मनुज के नाम पर "पट्टा" किसी ने लिख दिया॥

---

१ ये त्रिपसा परियन्ति विश्वरूपाणि विभ्रतः।
वाचिस्पतिर्वला तेषां तन्वो अघद दीतुमें॥

(अथर्व वेद प्रथम खन्ड)

अनवार्थ-(ये) ये (त्रिपसाः) त्रिषु जलस्थलान्तरिक्षेषुसम्बद्धः (विश्वरूपाणि विभ्रत) अनेक विध शरीराणि धारयन्तो नाना जन्तवः (परियन्ति) सर्वत्र भ्रमन्ति (तेषाम्) जलस्थलान्तरिक्षचवाराणां विविध-जीवानाम् (तन्वः) शरीराणि (वलो) बलवान श्रेष्ट इति यावत अथवा (वला) बलात्कारेणान्यायेनेति यावत् (वाचस्पति) वेदवाण्याः पालको विद्वान् (अघ) न हिनस्तु (मे) मां प्रीणयन्तु (दधातु) पुष्णातु।

भावार्थ-महा कारुण्यको जगदीश्वरो जीवान बोधयन्ति। सर्वैश्वर्य कारणीभूतायै मत्प्रीतये। विद्वद्भिः सर्व जन्तवः सदारक्षणीयाः न च तेषु केचन हिंसनीयाः

"भाव यह है कि समस्त पृथ्वी जल और आकाश में रहने वाले विविध प्रकार के जीवित प्राणी जो इस संसार में चक्कर लगा रहे हैं उनको वेदों का ज्ञान अथवा वेदों में श्रद्धा रखने वाला व्यक्ति कभी न मारे"।

जीवें मनुज संसार में अब और वे फूले फलें।
शेष प्राणी मौत बिन वे मौत कोल्हू में पिलें॥

(२५)

एक दिन श्रीमन् विनोबाजी[१] सुनाते थे हमें।
यह तीर्थ "सर्वोदय" सुखद सुख-शान्ति देवेगा तुम्हें॥
इस तीर्थ की वे रश्मियाँ निर्धन-धनी-गुणवन्त पर।
एक सम सब पर पड़ेंगी भेद-भाव निवार कर॥

(२६)

आज तक उन रश्मियों का क्या असर जग पर हुआ ?
इस तीर्थ रूपी सूर्य पर हिंसा-तिमिर-छाया हुआ॥
यह अनोखी बात लख आश्चर्य होता है हमें।
इस सूर्य की उस प्रखरता में निविड़-तम क्यों विश्व में॥

(२७)

या तो कहो यह सूर्य नहि यह मात्र केवल चक्र है।
रटते "अहिंसा" सूत्र को पर नीति इसकी वक्र है॥
केवल अहिंसा है प्रलोभन आजके इस तीर्थ में।
संसार के इस क्षेत्र में हिंसा खड़ी अपकीर्ति में॥

(२८)

इसलिये इस तीर्थ की अपकीर्ति अब मत कीजिये।
जो कुछ हुआ सो सब हुआ और रहने दीजिये॥

---

१ श्री विनोबाजी ने सर्वोदय समाज के जयपुर सम्मेलन में कहा था कि यह "सर्वोदय" का सूर्य अपनी किरणें राज-प्रासाद से लेकर निर्धन की झोंपड़ी तक समान रूप से फैलाता है........"। (जैनशासन)

सौभाग्य से इस तीर्थ के "राजेन्द्र" जी अध्यक्ष हैं।
वे अहिंसा के पुजारी देखलो प्रत्य है॥

(२९)

गणतंत्र भारतवर्ष के भी है सुखद श्री राष्ट्रपति।
धर्म-नीति-राजनीति है उन्हों की सुखद अति॥
उनकी प्रमुख अध्यक्षता में कर्म वीरो ! उठ पड़ो।
इस तीर्थ की उद्देश्य-रक्षा के लिये आगे बढ़ो॥

(३०)

वे मूक पशु करुणा भरी तुम से पुकारें कर रहे;
वे मौत से वे मूक प्राणी मौत विन वे मर रहे॥
खूनकी नदियाँ भयंकर बह रहीं इस भूमि पर।
कर्मवीरो ! तुम उठो !! बाँधो कमर अब धर्म पर॥

(३१)

सौभाग्यशाली देश पर इस पाप के सन्ताप से।
नित नव विपत्तियाँ आ रहीं हैं आज अपने आप से॥
इनसे बचाओ देश को अब बाँधलो उठ कर कमर।
अध्यक्ष जब "राजेन्द्र" हैं तो बढ़ चलो होकर निडर॥

(३२)

लेकर "अहिंसा"-चक्र को होकर निडर आगे चलो।
वे मौत जो अब मर रहें उनको जरा पहिचान लो॥
करुणाभरी उनकी पुकारें हृदय से सुन लीजिये।
मानवोचित कार्य जो हों फिर उन्हें तब कीजिये॥

(३३)

मानव-धरम १ कह खून पशुओं का बहाया जा रहा ।
मानव-धरम के नाम पर षड्यंत्र अब यह चल रहा ॥
मानव-धरम क्या प्राणियों के प्राण का भूखा रहा ?
मानव-धरम गणतंत्र युग में क्या अनूठा बन रहा ??

(३४)

इसलिये मानव२ धरम को मित्र ! अब पहिँचान लो ।
स्वार्थ-वश उन प्राणियों के भूल कर मत प्राण लो ॥
मानव-धरम है व्रत "अहिंसा"३ हृदय से पालन करो ।
इस तीर्थ की इस विषमता को शीघ्र अब बाहर करो ॥

---

१ "मैं मानता हूँ कि यह युग मानवता का है और यदि हम चाहते हैं कि अपने जीवन-काल में अपनी शक्तियों का योग दान मानवता की सुरक्षा और विकास के लिये दें, तो हमें हिंसा का, मानापमान की भावना की और अन्य दानवी प्रवृत्तियों का एक बारगी अन्त करना होगा"।

जीवाजीराव शिन्दे (राजप्रमुख मध्य भारत)

जैन गजट हीरक जयन्ती अङ्क पृ. १६३

२ प्रण प्राणों का प्राण है, प्राणी का भी प्राण ।
प्राणी-रक्षा के लिये प्राणी प्रण ले ठान ॥

(महात्मा भगवानदीन धर्मदूत)

3 "Not to oppress, not to destroy"-Comfort and be friend those in sufferings-

The Buddha Charit By Ashwaghosha(S. B.E.XIX P. 234)

(३५)

मानव धरम क्या प्राणि-वध करना सिखाता है हमें ?

दूसरों के प्राण हरना धरम क्या कहता तुम्हें ??

भावार्थ–"किसी को न सताओ किसी को न मारो, जो दुख में हैं उनकी सहायता करो" ।

\+ + + +

"A Bhikkhu......ought......not intentionally to destroy the life of any being down to a worm or an ant"

Maha Vagga 1. 78. 2.

× × × ×

जान बूझ कर चींटी या कीड़ी किसी भी प्राणी के प्राणों का अपहरण मत करो।

\+ + + +

"The great requirement is a loving heart to regard the people as we do an only son."

(Buddha Ohaita P. 234)

× × × ×

दयालु हृदय का होना परमावश्यक है, जनता (प्राणीमात्र) को अपने बेटे के बराबर मानना उचित है ।

इस्लाम१ बौद्ध२ रु पारसी३ ईसाई४ आदिक धर्म हैं।
किसने लिखा इस पाप को बतलाइये सत्कर्म है॥

(३६)

मांस-भक्षण मानवों को सर्वथा वर्जित कहा ।
देखिये उस बाइबिल५ को जो कि ईसा ने कहा॥
शान्ति से उसको पढ़ो मालूम सब हो जायगा ।
ईसामसीहा तत्व भी हिंसा नहीं बतलायगा ॥

---

१ जो दूसरे के प्राणों की रक्षा करता है, वह गोया तमाम मनुष्य-समाज के प्राणों की रक्षा करता है। (कुरानशरीफ आ॰ ५)

२ हमें समस्त जगत के सभी जीवों के प्राणों का मूल्य जानकर उनके प्रति दूर और नजदीक घृणा और द्वेष से रहित होकर हिंसक (प्रेम रहित) व्यवहार नहीं करना चाहिये। (सुत्तनिपात)

३ जो दुष्ट मनुष्य, पशुओं, भेड़ों और अन्य चौपायों की अनीति पूर्वक हत्या करता है उसके अङ्गोपाङ्ग तोड़ कर छिन्न भिन्न किये देता हूँ।
(आदि विरफ २७४-२६२)

4 "DO NOT KILL" (BIBLE)

अर्थात् किसी भी प्राणी को मत मारो ।

तुझे हत्या नहीं करना चाहिये। (दश आज्ञाएँ)

५ एक समय बहुत से ईसाईयों को मांस-भक्षण करते देख कर महात्मा ईसामसीह ने क्रोध किया था जैसा बाइबिल में कहा है "while the flesh was yet between their teeth, ere it was chewed the wrath of the Lord was kindled against

(३७)

मानवों की मात्र रक्षा के लिये प्राणी हने ।
यह धर्म मानवता जगत में लोकप्रिय कैसे बने ??
मानव धरम में विश्व के कल्याण की शुभकामना :
खुद "जियो" आनन्द से पर जीव-वध करना मना ॥

(३८)

पर आज मानव, धर्म को उलटा कलंकित कर रहे ।
प्रति दिन निरंतर, प्राणि-वध की योजनाएँ रच रहे ॥
मानवों के स्वास्थ्य-हित कह, प्राणियों के प्राण-हर ।
माँस-भक्षण के लिये प्रेरित करें होकर निडर ॥

(३९)

लेकिन इसे तुम सोच लो क्यों व्यर्थ पाप कमा रहे ?
मानवों की स्वास्थ्य-रक्षा मांस में बतला रहे ॥
किन्तु मानव मांस-भक्षी प्रकृति[१] से है ही नहीं ।
स्वास्थ्य-घातक देश का यह मांस भक्षण है सही ॥

---

the people and the Lord smote the people with a very great plague"

भावार्थ—बहुत से मनुष्य मांस को मुँह में लेकर दांतों से चबा रहे थे, इतने मे परमेश्वर का कोप लोगों पर भभक उठा और बड़ा भारी रोगों का समूह लाकर लोगों को दण्ड दिया ।

१ प्रोफेसर पीरो गेसेंडी लिखते हैं कि All animals whom nature her formed to feed on flesh have their long

(४०)

पश्चात् के विद्वान डॉक्टर सब हमें बतला रहे ।

मांस-भक्षण हानिकारक वे स्व मत नित दे रहे ॥

'वायल'१ कहे क्या देखलो 'जनवुड'२ हमें क्या कह रहे?

"सिम्सवुडहेडे"३ हमें स्पष्ट ही बतला रहे ॥

---

teeth, conical, sharp uneven and with intervals between them of which kind are lions, tigers, wolves dogs, cats and others. But those who are made to subsist only on heres and fruits have their teeth sharp, blunt, close to one another, and distributed in even rows."

(Professor Pierre Gassendi)

अर्थात्-जो स्वभाव (प्रकृति) से मांसाहारी है उनके दांत लम्बे तेज और विषम होते हैं, तथा उनके बीच में अन्तर रहता है। इस प्रकार के जानवर सिंह, व्याघ्र. भेड़िये, कुत्ता, बिल्ली वगैरह हैं परन्तु जो शाक, फल और जड़ी बूटियों पर जीवन निर्वाह करने के लिये बनाये गये हैं, उनके दांत छोटे, बिना धारके पास पास बराबर पंक्ति में होते हैं।

१ प्रोफेसर "वायल" कहते हैं "I see no reason why men with well chose vegetable food need go to the animal kingdom for alluminous matters.

(Prof. Voil)

(४२)

आज भारतवर्ष में घर घर भयङ्कर रोग हैं।
यह सभी भक्षण-क्रिया के कटुक फल उपभोग हैं॥
शक्ति वढ़ाना चाहते जो मांस का उपयोग कर॥
उनके लिये हम लिख रहे हैं आज होकर के निडर॥

(४३)

मांस-भक्षण के प्रथम यह वाक्य पढ़ना चाहिये।
जोशिया[१] की राय पर भी ध्यान देना चाहिये॥
पाश्चात्य के इन डाक्टरों की राय मँगवा लीजिये।
फेर भारतवर्ष में जो कुछ जँचे सो कीजिये॥

"I Know how much of the preavailing diet is not merely a wasteful extravagance, but a source of serious evil to the Consumer"

अर्थात्-मैं समझता हूँ कि जो मांस का अधिक प्रचार हो रहा है, इसमें केवल फिजूल खर्ची ही है और खाने वाले के लिये बड़ा हानिकारक है, क्योंकि इससे भयंकर रोग पैदा हो जाते हैं।

१ डाक्टर जोशिया ओल्ड (D. C. L. M. A. M. R. C.- S. L. R. C. P.) कहते हैं कि: "There is little need of wonder that flesh eating is one of the most serious causes of the diseases that carry off ninety nine out of every hundred people that are born.

अर्थात्-इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि मांस-भक्षण से ऐसे भयंकर रोग पैदा हो जाते हैं जिनके कारण सैंकड़ा पीछे निन्यानवे आदमी मरजाते हैं।

(४४)

हाय ! भारत एक दिन तू परमपावन था प्रबल ।
किन्तु इस दुखमय प्रथा से आज तू है अति निबल ॥
मानव-धरम का नाम कह यह काम क्यों विपरीत हो ?
संसार के उन मूक पशुओं पर महा अनरीत हो ॥

(४५)

मानव-धरम की रूपरेखा है यही क्या तीर्थ में ?
बतलाइये अब कृपा करके क्या लिखा है नीति में ??
उसको जरा हम देख लेंवे क्या बताता तीर्थ है ?
या नहीं ऐसा हुआ तो तीर्थ की अपकीर्ति है ॥

(४६)

कविरत्न शेक्सपियर[१] हमें इसके विरुद्ध बता रहे ।
ध्यान से उसको पढ़ो हम आपको बतला रहे ॥
मानव धर्म का मूल क्या है ध्यान से पढ़ लीजिये ?
फेर मरजी आपकी अच्छा लगे सो कीजिये ॥

---

१ जगत प्रसिद्ध कविरत्न शेक्सपियर वन्स नगर के व्यापारी नामक नाटक में संक्षिप्त लिखते हैं कि ।

It droppeth as the gentle rain from heaven,
Upon the place beneath; it is twice blest;
It blesseth him that gives and him that takes:
Tis mightiest in the mightiest it becomes
The throned monarch better than his crown;

His sceptre shows the force of temporal power
The attribute to awe and majesty,
Wherein doth sit the dread and fear of kings. !
But Mercy is above this sceptred sway;
It is enthroned in the hearts of kings,
It is an attribute to God himself;
And earthly power doth then show likest God's
When mercy seasons justice, we do pray for mercy !
And that same prayer doth teach us all to render,
The deeds of mercy.

अर्थात्-जैसे ऊपर से मेघों के द्वारा जल-वृष्टि होती है और संसार में सन्ताप से शान्ति होती है, उसी प्रकार देवलोक से दया की वृष्टि होती है। जो दया करे और जिस पर दया की जावे, इन दोनों के लिये दया कल्याण की करनेवाली है। दया राजाओं को मुकुट से भी अधिक शोभित करती है। क्योंकि दया ईश्वर का ही एक अंश है। राजा लोग ज्यों ज्यों अपने न्याय-शासन में दया की प्रधानता देते रहेंगे त्यों त्यों उनकी अलौकिक शक्ति ईश्वरीय शक्ति की समीपता को प्राप्त होती जायगी।

(वन्श नगर का व्यापारी नामक अंग्रेजी नाटक से उद्धृत)

षष्टम सर्ग

सर्वोदय
का
समीचीनता

---

(१)

सर्वज्ञ[१] भाषित धर्म ही संसार में इक सार है ।
इस धर्म[२] से ही दुखित प्राणी पहुँचता भव-पार है ॥
जिसमें भरी हो प्राणियों की सरस मंगल कामना ।
जिसके सहारे प्राणियों में हो सतत सद्भावना ॥

---

१ आप्तेनोच्छिन्नदोषेण सर्वज्ञेनागमेशिना ।
भवितव्यं नियोगेन नान्यथा ह्याप्तता भवेत् ॥

(रत्नकरण्ड श्रावकाचार)

अर्थात्-नियम से राग-द्वेष रहित वीतराग-सर्वज्ञ (भूत-भविष्य वर्तमान का ज्ञाता) और आगम का ईश (सबको हित का उपदेश करने वाला) ही आप्त (सत्यार्थ वक्ता) अर्थात् सच्चा देव होता है । निश्चय

(२)

जहँ पर न किञ्चित राग हो नहिं द्वेष-मत्सर भाव हो।
संसार की पर वस्तु से जिनको न कुछ भी चाव हो॥
निज स्वार्थता की भावना किञ्चित न जहँ लवलेश हो।
अरु वीतरागी भावना का एक मात्र प्रवेश हो॥

(३)

संसार की निस्सारता का जहँ प्रदर्शन हो रहा।
अज्ञान-माया मोह के तमको निरन्तर खो रहा॥

करके और किसी को आतपना (देवपना) नहीं हो सकता है।

२ "सद्दृष्टि ज्ञानवृत्तानि धर्मं धर्मेश्वरा विदुः"

(रत्नकरण्ड श्रावकाचार)

अर्थात्-धर्म के ईश्वर गणधरादि आचार्यों ने सम्यग्दर्शन, ज्ञान, तथा चारित्र को ही धर्म कहा है।

विद्वद्भिः सेवितः सद्भिर्नित्यमद्वेषरागिभिः।
हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस्तं निवेदितः॥

अर्थात्-राग, द्वेष, शून्य विद्वान सत्पुरुषों ने जिसका सदा सेवन किया है और हृदय से मुख्य जाना है उस धर्म को सुनो।

जहँ पर निरन्तर वीतरागी१ भावना उत्पन्न हो ।
संवेग२ अनुकम्पा३ दया के भाव पूरित चिन्ह हो ॥

---

१ क्षुत्पिपासा जरातङ्क जन्मान्तक भयस्मयः ।
न राग द्वेष मोहाश्च यस्याप्तः स प्रकीर्तते ॥

भावार्थ–जिसके क्षुधा, तृष्णा, बुढ़ापा, रोग, जन्म, मरण, भय, गर्व, राग, द्वेष, मोह, चिन्ता, मद, अरति, खेद, स्वेद, निन्द्रा, आश्चर्य, नहीं है वही वीतरागी है, और इस वीतराग अवस्था को प्राप्त करनेवाला वीतरागी है और वही आप्त वा देव है।

२ संवेग परमोत्साहो धर्मे धर्मफले चितः ।
स धर्मेष्वनुरागो वा प्रीतिर्वा परमेष्ठिषु ॥

(पञ्चाध्यायी अध्याय २ श्लोक ४३१)

भावार्थ–आत्मा के धर्म और धर्म के फलों में पूरा उत्साह होना संवेग कहलाता है। अथवा समान धर्मियों में अनुराग करना, अथवा पञ्च परमेष्ठियों में प्रेम करना संवेग कहलाता है। ('संसाराद्भीरुता संवेगः')

३ अनुकम्पा क्रियाज्ञेया सर्वसत्वेष्वनुग्रहः ।
मैत्री भावोऽथ माध्यस्थं नैशल्यं वैर वर्जनात् ॥ ४४६ ॥

(पञ्चाध्यायी)

भावार्थ–सम्पूर्ण प्राणियों में उपकार बुद्धि रखना अनुकम्पा (दया) कहलाती है। अथवा सम्पूर्ण जीवों में मैत्री भाव रखना भी अनुकम्पा कहलाती है। अथवा द्वेष बुद्धि को छोड़ कर मध्यम वृत्ति धारण करना भी अनुकम्पा है। अथवा शत्रुता छोड़ देने से सम्पूर्ण जीवों में शल्य रहित (निःकषाय) हो जाना भी अनुकम्पा है।

("सर्वभूतदयानुकम्पा")

(४)

स्वार्थ-पूरित भावना जिसमें तिरोहित हो रही।
आत्म-चिन्तन तत्त्व-बुद्धी के सिवा दूजी नहीं ॥
वीतरागी तत्व के आश्रय "स्व" सम्यग्ज्ञान १ ही।
जड़ और चेतन-मिश्र परणति तत्त्व २ का श्रद्धान ३ हो ॥

---

१ *अन्यूनमनतिरिक्तं याथातथ्यं विना च विपरीतात्।*
निःसन्देहं वेद यदा हुस्तज्ज्ञानमागमिनः ॥ ४२ ॥

(रत्नकरण्ड श्रावकाचार)

भावार्थ-जो वस्तु के स्वरूप को न्यूनता रहित, अधिकतारहित विपरीततारहित जैसा का तैसा सन्देह रहित जानता है उसको आगम के पुरुष सम्यग्ज्ञान कहते हैं।

२ *"आत्मकर्मणोरन्योऽन्य प्रदेशानुप्रवेशात्मको बंध"*

(सर्वार्थसिद्धि)

भावार्थ-पुद्गल कर्मों का आत्म प्रदेश के साथ एक क्षेत्रावगाह होना बन्ध है।

पञ्चाध्यायीकार आचार्य श्री अमृतचन्द्रसूरि ने इस विषय का स्पष्ट खुलासा इस प्रकार किया।

३ *अथयथा कथञ्चिज्ज्ञानादन्यत्र न प्रमाणत्वम्।*
करणादि विना ज्ञानादचेतनं कःप्रमाणयति ॥ ७७५ ॥

अर्थात्-किसी प्रकार भी ज्ञान को छोड कर अन्य किसी जड़ पदार्थ में प्रमाणता आ नहीं सकती। बिना ज्ञान के अचेतन करण, सन्निकर्ष इन्द्रिय आदि को कौन प्रमाण समझेगा? अर्थात् प्रमाण का फल

(५)

संसार की पर वस्तुओं से राग परणति दूर हो।
सद्-ज्ञान१-दर्शन२-और चारित३ से हृदय परिपूर्ण हो॥

प्रमा–अज्ञान निवृत्ति रूप है. जिनका कारण भी अज्ञान निवृत्ति रूप होना आवश्यक है, इसलिये प्रमाण भी अज्ञान निवृत्ति ज्ञान-स्वरूप होना चाहिये। जड़ पदार्थ प्रमेय हैं, वे प्रमाण नहीं हो सकते हैं, अपने आप को जाननेवाला ही परका ज्ञाता हो सकता है, जो स्वयं अज्ञान रूप है वह स्व–पर किसी को नहीं जान सकता है। इसलिये करण आदि जड़ हैं, वे प्रमाण नहीं हो सकते हैं किन्तु ज्ञान ही प्रमाण है।

१ स्वापूर्वार्थद्वयोरेव ग्राहकं ज्ञानमेकशः।
नात्र ज्ञानमपूर्वार्थो ज्ञानं ज्ञानं परः परः॥ ३९७॥

(अध्याय २ पञ्चाध्यायी)

भावार्थ–निज और अनिश्चित पदार्थ दोनों के ही स्वरूप का ग्राहक ज्ञान है, वह दोनों का ही एक समय में निश्चित करण है, परन्तु अनिश्चित पदार्थ का निश्चय कराते समय ज्ञान स्वयं उस पदार्थ रूप नहीं हो जाता है। ज्ञान ज्ञान ही रहता है और पर पदार्थ पर ही रहता है।

अथवाः—

संसय विमोह विब्भम विवज्जयं अप्पपर सरूवस्स।
गहणं सम्मं णाणं सायर मणेय भे यंच ॥४२ द्रव्यसंग्रह॥

× × × ×

अन्यूनमनतिरिक्तं यथा तथ्यं विना च विपरीतात्।
निःसन्देहं वेद यदा हुस्तज्ज्ञान मागमिनः॥ ४२॥

(रत्नकरण्ड श्रावकाचार)

२ "श्रद्धानं परमार्थानामाप्तागम तपो भृताम्" ।

भावार्थ-जो सच्चे देव, गुरु, शास्त्र, का हृदय से श्रद्धान करता है उसको सम्यग्दर्शन कहते हैं ।

अथवा:—

"तत्वार्थ श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्" (मोक्षशास्त्र प्र. अ.)

+ + + +

"जीवादी सद्दहणं सम्मत्तं रूवमप्पणो तंतु" (द्रव्य संग्रह)

भावार्थ-जीवादि सात तत्वों का श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है ।

× × × ×

सम्यक्त्वं वस्तुतः सूक्ष्मं केवल ज्ञान गोचरम् ।

गोचरं स्वावधिस्वान्तपर्ययज्ञानयोर्द्वयोः ॥ ३७५ पंचाध्यायी ॥

भावार्थ-सम्यग्दर्शन वास्तव में आत्मा का अति सूक्ष्म गुण है । वह केवल ज्ञान का विषय है । तथा परमावधि, सर्वावधि और मनःपर्यय ज्ञान का भी विषय हैं अर्थात इन तीनों ज्ञानों से जाना जा सकता है ।

३ हिंसानृतचौर्य्येभ्यो मैथुन सेवा परिग्रहाभ्यांच ।

पाप प्रणालिकाभ्यो विरत संज्ञस्य चारित्रम् ॥ ४९ ॥

(रत्नकरण्ड श्रावकाचार)

भावार्थ-हिंसा, असत्य, चोरी तथा मैथुन-सेवा और परिग्रह इन पांच पापों की प्रणालियों से विरक्त होना ही सम्यक्चारित्र है ।

किंवा:—

" असुहादोविणिवित्ती सुहेपवित्ती य जाण चारितं" (द्रव्यसंग्रह)

भावार्थ-अशुभ से विरक्त होना और शुभ में प्रवृत होना सो चारित्र है ।

सर्वाङ्ग सम्पूर्ण अहिंसा का जहाँ सम्मान हो।
वीतरागी भावना१ का ही सहज प्राधान्य२ हो ॥

(६)

उसको कहा है "सत्य३ सर्वोदय" जहाँ यह व्याप्त हो।
कल्याण प्राणी मात्र के हित मार्ग सब पर्याप्त हो ॥

---

१ सत्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम् ।
माध्यस्थ भावं विपरीतवृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देवः ॥

(अमितगति सूरि)

हे देव ! मैं समस्त जगत के जीव मात्र से मैत्री, गुणीजनों के साथ हृदय में प्रेम, और जो इस संसार में रोग, शोक, भूख, पिपासादि बाधाओं से दुखित हैं, उनके लिये अन्तरङ्ग में दया-भाव, जो विपरीत स्वभाव वाले दुर्जन, क्रूर, कुमार्गी, मिथ्यात्वी, पुरुष हैं उनके साथ माध्यस्थ भाव चाहता हूँ।

O Lord ! make my self such that I may have love for all beings, joy in the Company of the meritorious, unstinted sympathy for the distressed and tolerance towards the perversely inclined.

PURE THOUGHTS Page No. 1

२ मुख्यता ३ समीचीन

(९)

कल्याण की शुभ-कामना ही सत्य का आदर्श है।
सत्यका आदर्श ही इस तीर्थ का निष्कर्ष है ॥
निष्कर्ष जिसका हो परम उत्कृष्ट वह उत्कृष्ट है ।
वह तीर्थ है, वह धर्म है परमोत्कृष्ट विशिष्ट है ॥

(१०)

परमोत्कृष्ट विशिष्टता ही मुक्ति-पथ का मन्त्र है ।
इस मंत्र की अप्राप्ति से प्राणी हुआ परतंत्र है ॥
इसके बिना संसार के मिटते न अत्याचार है ।
इसलिये इनके चरण में नमत शत शत बार है ॥

(११)

तेरे बिना इस तीर्थ का होता नहीं उद्धार है ।
तेरा न यदि अस्तित्व हो तो तीर्थ वह बेकार है ॥
इसलिये इस तीर्थ का तूं प्राण और प्रमाण है ।
सम्पूर्ण पुरुषों में तुहीं इक मात्र पुरुष प्रधान है ॥

(१२)

हे तीर्थ ! अब मैं अन्त में वन्दन तुम्हारा कर रहा ।
करजोड़ "मोती-सुत" तुम्हारे चरण में शिर धर रहा ॥
करिये कृपा इस विश्व पर सुख-शांति-और समृद्धि हो ।
संकट-विपति-आपत्ति "छोटे" विश्व के सब मेट दो ॥

॥ इति शुभम् ॥

समीचीन-सर्वोदय-काव्य

श्री भागीरथजी लक्ष्मीचन्दजी ट्रस्ट भवन
जीवाजीगंज, उज्जैन.

समीचीन-सर्वोदय

काव्य

प्र क र ण

॥ श्री ॥

ये क्या लिखते हैं ?

कि:—

"मैंने इस समीचीन–सर्वोदय काव्य को पढ़ा, इसमें छह सर्ग हैं। इन सर्गों में लेखक ने प्राचीन ऋषियों और अर्वाचीन विद्वानों के प्रमाण देकर अहिंसा को ही प्राच्य सर्वोदय सिद्ध किया है, वास्तव में देखा जाय तो प्राणी का हित करने वाली एक अहिंसा ही सर्वोदय है, यही प्राणी मात्र का धर्म कहलाता है, इसके बिना अर्थात् धर्म विहीन-धर्म रहित-धर्म विमुक्त-धर्म निरपेक्ष आदि आधुनिक सर्वोदय सम्बन्धित जो शासन है वे सर्वोदयी शासन नहीं हैं, और न इस अर्वाचीन सर्वोदय से किसी प्राणी का हित होसक्ता है, देखने में चाहें किम्पाक फल के समान सुन्दर हों किन्तु परिपाक में उद्देश्य विहीन होने से दुखदाई ही सिद्ध होवेगा। ऐसा विद्वान लेखक ने इस समीचीन–सर्वोदय में संक्षेप में गम्भीर रूप से बहुत सुन्दरता पूर्वक सिद्ध किया है।"

इस काव्य की रचना भाव पूर्ण तथा ललित शब्दों में की गई है, पढ़नेवालों की रुचि स्वाभाविक जागृत हो उठती है अतः आशा की जाती है कि इस काव्य द्वारा जनता यथेष्ट लाभ उठाएगी, पण्डितजी का प्रयत्न सफल है

ब्र० चांदमल चूड़ीवाल नागौर
(राजस्थान)

॥ श्री ॥

समीचीन सर्वोदय के प्रतीक दिगम्बर वीतराग संत-चारित्र-चक्रवर्ती योगेन्द्र चूड़ामणि १०८ आचार्य श्री शांतिसागरजी महाराज

के

विषय में लोक-मत

१ भारत स्थित अमरीकी राजदूत श्री चेस्टर बौल्ज लिखते हैं कि:-

"As the representative in India of the government and people of the United States, therefore, it is with reverence and humility that I join with those who pay tribute in this issue of the Jain Gazette to the great saint Acharya Shri Shanti Sagar Maharaj."

अर्थात्-संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार एवं जनता के भारत-स्थित प्रतिनिधि के रूप में, मैं बड़ी श्रद्धा एवं नम्रता के साथ महान सन्त आचार्य श्री शान्तिसागरजी के प्रति श्रद्धाञ्जलि समर्पित करता हूँ।

२ भारत-स्थित चिली के राजदूत डाक्टर वान चेस्टर-वौल्ज मारिन लिखते हैं कि।

"The greatest lesson of India to the world is Ahimsa and in that field Acharya Sri Shanti Sagar Maharaj reached unequalled heights.

अर्थात्- अहिंसा सिद्धान्त ही विश्व को भारत की महानतम शिक्षा है। अहिंसा के इस क्षेत्र में आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज सर्वोच्च शिखर पर आरूढ़ हैं।

(डॉ. वान मारिन)

३ श्री एस. राधाकृष्णन् (उपराष्ट्र पति तथा सुप्रसिद्ध दार्शनिक विचारक) लिखते हैं कि:-

"Such people incarnate the spirit of our great Country."

Dr. Padha Krishnan
Vice President of the Indian Republic.

"आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज के जीवन एवं कार्यों के लिये धन्यवाद, ऐसे लोग हमारे महान देशकी आत्मा के मूर्त्ति स्वरूप हैं।

४ श्री जी० वी० मावलंकर (अध्यक्ष लोक-सभा) लिखते हैं:-

"I take this opportunity of paying my homage to the great Acharya whose life is a source of

inspiration not only to his followers but to all public workers.

अर्थात्-आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज का जीवन न केवल उनके अनुयायियों के लिये वल्कि सभी सार्वजनिक कार्यकर्ताओं के लिये प्रेरणा-श्रोत है, इस शुभ अवसर पर मैं उनको अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पित करता हूँ, आचार्य श्री दीर्घायु हों और हमें सदा प्रेरणा प्रदान करते रहें।

श्री एन० चन्द्रशेखर अय्यर (भारत के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश लिखते हैं कि:-

"The pure and holy, to what-ever religion they may belong and what-ever philosophy they may accept, are not of the particular Community or caste in which they are born, they are the benefactors of humanity as a whole. Acharya Shanti Sagar belongs to this great group of saints and his selfless life of 'Ahimsa' and Compassion is a noble example for us to emulate. If our Country has more men of this type, spiritual progress as well af material prosperity will be assured. They serve as finger--posts to guide us into the right path.

अर्थात्-शुद्ध एवं पवित्र पुरुष चाहे वे किसी भी धर्म के हों, किसी भी सिद्धान्त का अवलम्वन करें, किसी एक समाज या

जाति तक सीमित नहीं होते हैं, जिनमें उनका जन्म हुआ हो। ऐसी विभूतियाँ मानव मात्र की हितकारी होती हैं।

आचार्य श्री शान्तिसागरजी महाराज इस महान मंडली के एक सदस्य हैं अहिंसा एवं दया से पूर्ण उनका निस्वार्थ जीवन एक ऐसा ज्वलंत आदर्श प्रस्तुत करता, जो हम सबके लिये अनुकरणीय है। यदि हमारे देश में ऐसे नर रत्न और भी हों तो हम निश्चित रूप से आध्यात्मिक प्रगति तथा ऐहिक समृद्धि को प्राप्त कर सकते हैं। ऐसे सत्पुरुष हमें सही मार्ग पर चलाने वाले पथ-प्रदर्शक चिन्ह होते हैं।

श्री आसफअली (भूतपूर्व राज्यपाल उड़ीसा-भारतीय राजदूत स्वीट्ज़रलैण्ड लिखते हैं किः-

"A man of such saintly character deserves to be respected"

"ऐसे सन्त प्रकृति के सत्पुरुष श्रद्धा के पात्र हैं"।

श्री मिश्रीलालजी गंगवाल (मुख्यमंत्री मध्य-भारत) लिखते हैं किः-"विश्व मैत्री, भ्रातृत्व एवं विश्व-शान्ति के प्रतीक आचार्य श्री के द्वारा मानव जाति का जो आध्यात्मिक कल्याण हो रहा है उससे कौन अपरिचित है ? आजके कठिन समय में आचार्य महाराज की गंगा के समान सरल तथा निस्पृह वाणी न केवल आत्मोद्धारक है वरन् समाज घाती वृत्तियों को रोकने में परम सहायक सिद्ध हुई है वह भी किसी जाति विशेष के लिये ही नहीं, अपितु समस्त मानव समाज के लिये लाभदायक है। मैं आचार्य श्री के प्रति अपनी श्रद्धा एवं भक्ति प्रदर्शित करते हुए उनकी दीर्घायु की कामना करता हूँ।

इसके अतिरिक्त—

स्वीडन, फ्रांस, इटली, अफगानिस्थान, आस्ट्रेलिया, लंका, आदि के प्रमुखों तथा महाराजाधिराज नेपाल, श्री पी० वी० राज मन्नार (मद्रास हाईकोर्ट के प्रधान न्यायाधीश) श्रीमन्त जीवाजीराव सैंधिया राजप्रमुख, (मध्यभारत) श्रीमन्त महाराज कोमची (त्रावनकोर-कोचीन के उपराज प्रमुख) श्रीचन्दूलालजी त्रिवेदी (राज्यपाल पञ्जाब) श्री रंगनाथ दिवाकर (सूचना एवं ब्राडकास्टिङ्ग के भूतपूर्व मन्त्री तथा विहार राज्य के नव नियुक्त राज्यपाल) श्री एस. फजलअली (गवर्न उड़ीसा) श्री आर. के. सिंधवा (भारत सरकारके गृह विभागके राज्य मन्त्री) श्रीटीकाराम जी पालीवाल (मुख्य मन्त्री राजस्थान) श्री व्रजलालजी वियाणी (अर्थमन्त्री-मध्यप्रदेश) श्री हरिभाउ उपाध्याय (मुख्य मन्त्री अजमेर) श्री पट्टाभि सितारामैय्या (कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष विचारक और लेखक) श्रीकुमार स्वामी राजा (मद्रासके भूतपूर्व मुख्य मन्त्री) श्री वाई. एस. परमार (हिमाचल प्रदेश के मुख्य मन्त्री) श्री गोस्वामी गणेशदत्तजी (सनातन धर्म जगत के सुप्रसिद्ध नेता) अनेक पदविभूषित श्रीमन्त सरसेठ हुकमचन्दजी साहब सरनाइट इन्दौर, श्रीमान् धर्मवीर सेठ भागचन्द्रजी सोनी अध्यक्ष श्री भारतवर्षीय दि० जैन महासभा आदि आदि अनेक प्रमुख पुरुषोंने अपने उद्गगार इन सर्वोदयी परम सन्तके सम्बन्ध में जो प्रकट किये हैं।

[देखो जैन गजट आचार्य हीरक जयन्ती अङ्क १२ जून सन ५२]

परिशिष्ट नं० २

(ग्रन्थ–प्रमाण–पृष्ठ–सूची)

नाम ग्रन्थ	पृष्ठ	नाम ग्रन्थ	पृष्ठ
१ अनागार धर्मामृत	११-४५	२३ धर्मयुग	७५
२ अथर्वेद	७२	२४ नीतिवाक्यामृत	२०-२५
३ अशोक के शिलालेख	५१	२५ पार्श्व पुराण	५
४ अशोक के धर्म लेख	५१	२६ पञ्चाध्यायी	१७-४२-६२
५ अमृत बाजार पत्रिका	२६	२७ पुरुषार्थ सिद्धयुपाय	७-८-११-१२-१३-१४-१५-१६-२८
६ आदि पुराण	१८-२८	२८ पञ्चतंत्र	४६
७ आत्मानुशासन	४४	२९ वृहद् स्वयम्भू स्तोत्र	१०-१७-१६
८ आप्त परीक्षा	६	३० वुधजन सतसई	३
९ आइने अकबरी	४५-६८-७७	३१ वाल्मिकी रामायण	१२
१० आर्द विरफ़	६१	३२ वैशेषिक दर्शन	४३
११ इ० तिमिर नाटक	५०	३३ विष्णु पुराण	४६
१२ कौटिल्य अर्थ शा.	४७-६९-७०	३४ भगवद्गीता	१०-४६
१३ कुरान शरीफ	५९-६०-७७	३५ भाव संग्रह	३०-३१
१४ कल्याण	६५	३६ भगवान बुद्धदेव	२५
१५ गोमट्टसार	८	३७ भगवान महावीर	५२
१६ छहढाला	६३	३८ मैक क्रिण्डल	४७
१७ जैन शासन	४९-७१-७३	३९ महापुराण	२१-२२-२७
१८ जातक माल	७१	४० महावीर चरित	३-४
१९ जैन गजट	६४-७५	४१ महाभारत	१७-२९-३१-३२-३३
२० दश आज्ञाएँ	६०-७७		
२१ द्रव्य संग्रह	८८		
२२ धम्म पदा	३२		

४२ मनुस्मृति ४८
४३ महात्मा गौतमबुद्ध ५६
४४ मीमाँसा दर्शन ३६
४५ मुण्डकोप निपध ५०
४६ मोक्ष शास्त्र ६३
४७ मुलातुमुलसादीन ३५
४८ यशस्तिलक ७-१६
४६ युगधारा मासिक २५
५० युक्तनुशासन ३-२
५१ राजवर्तिकालंकार ६
५२ रत्नकरण्ड श्रावका० ३४-३५-४२-८५-८६-८८
५३ लघीयस्त्रय ६
५४ सर्वार्थ सिद्धि ८८-६३
५५ सागारधर्मामृत २६-२८
५६ साभाष्य अधिगम ७-८-३६-३७-६२
५७ सम्यक्त्व कौमदी १६-२०
५८ सामायिक पाठ ६१
५६ सुभाषित र० भा० ३
६० सूत्रनिपात ६१-७७
६१ शिव पुराण ७०
६२ सर्वभूतदयानुकम्पा ८७
६३ हिन्दुस्थानकी पुरानी ५५

परिशिष्ट नं० ३

(उद्गारों की पृष्ठ सूची)

नाम	पृष्ठ
१ कुन्दकुन्द	४१
२ समन्त भद्र	२-३-३४-३५-४२-८५-८६-८८
३ अकलंक देव	६
४ भगवज्जिनसेन	१८-२१-२२-२७-२८
५ उमास्वामी	७-८-३६-३७-६२-६३
६ गुणभद्राचार्य	४४
७ अमृतचन्द्र	१७-४२-६२
८ आचार्य नेमिचन्द्र	८
६ आ० अमितगति	६६
१० सोमदेव	७-१६-२०-२५
११ देवसेन सूरि	३०-३१
१२ पूज्यपाद	८३-८८
१३ आशाधर	११-१५-१६-२८
१४ भूधरदासजी	५
१५ बुधजनदासजी	३

१६ दौलतरामजी ६३
१७ कवि असग २-४
१८ आर. सी. दत्त ४०
१९ अब्राहम लिंकन २४
२० अब्दुल फजल ५८
२१ राधाकृष्णन् ४३
२२ एरियन यूनानी ३४
२३ एलची अब्दुलरज्जाक ३५
२४ वाल्मिक २२
२५ कालिदास ३७
२६ नरहरी ६७
२७ काशीनाथ २५
२८ कर्नल स्लीमन ३४
२९ गुरुनानक ६१
३० जार्ज बनर्डशा ५३
३१ जीवाजीराव सिंधे ७५
३२ हैरिस ग्रीलो ८१
३३ डा. जोसिया ८२
३४ डा. जानवुड ८०
३५ तान. युन. शां. ५६
३६ नियोगीजी ४०
३७ पीरोगेसेंडी ७८
३८ वायल ७९
३९ सिम्स वुडहेडे ८०
४० श्रीजवाहिरलालजी ४
४१ वशिष्ट ६३
४२ वेणीप्रशाद ५५
४३ विवेकानन्द ४३
४४ ब्रजलाल वियानी ६४
४५ महाराजा भोज ३७
४६ महात्मा बुद्धदेव २५
४७ शेक्सपियर ८३
४८ भगवादीन ७५
४९ गौतमबुद्ध ५९
५० महात्मा गांधी ६५
५१ भण्डारी ३
५२ मेगास्थानीज ३४
५३ राजा शिवप्रशादजी ५०
५४ रोम्या रोला ५४
५५ लार्ड एवरी ४०
५६ लेलिन ४१-४२
५७ अशोक ५१
५८ चन्द्रगुप्त ४७
५९ सिकन्दर ३८
६० अकबर ५७
६१ सी. एफ. इण्ड्रूज ५३
६२ सेन्टल्यूक ६०
६३ शर हेनरी थाम्सन ८१
६४ सन्त फ्रांसिस ६०
६५ सन्त विनोबाजी ७३
६६ सुमेरुचन्दजी दि० ४९-७१
६७ हैरिस सा. ८१

परिशिष्ट नं० ४

अंग्रेजी ग्रन्थ प्रमाण पृष्ठ सूची

	Name	P.
1	King Henry	3
2	Amrita Bazar Patrika	57
3	Statesman	4
4	Mind & Face of Bolshevisim	41
5	Ain-i-Akbari	58
6	Modern Review	24
7	Dhammapada	32
8	The Jatak Mala	71
9	The Budha Chaitar	75-76
10	Mahavagga	77
11	Bible	2-77
12	Merchant of Venice	83
13	Pure Thoughts	91